UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180904

UNIVERSAL
LIBRARY

भूख

[हृदय-विदारक सामाजिक नाटक]

जिसको
श्री रामाश्रम हाईस्कूल अमृतसर की नाट्य-समिति
ने
अपने—सेठ सन्तलाल रङ्गमञ्च पर
उपस्थित किया।

लेखक
वीरदेव 'वीर', बी० ए०

प्रकाशक
इंडियन प्रेस, लिमिटेड,
गनपत रोड, लाहौर।

प्रथम संस्करण] १९४६ [मूल्य १)

सेटिंग के सम्बन्ध में...

फ़िल्मों ने दर्शकों का दृष्टि-कोण बदल दिया है। ऊँचा चिल्ला-चिल्लाकर बोलने का युग चला गया। इस कारण रङ्ग-मञ्च तभी सफल हो सकता है यदि वह अप्राकृतिक तरीक़े की बोलचाल को छोड़कर प्राकृतिक विधियाँ अपनाये। लाउड स्पीकर का मञ्च पर प्रयोग करके मैंने देखा है कि इस सम्बन्ध में अपार सफलता प्राप्त हो सकती है। एक माइक्रो ठीक स्टेज के प्रारम्भ पर मध्य में और एक पीछे सेट हुए दृश्यों में रक्खा जावे। ये दोनों एक साथ चालू हों तो स्टेज की ज़रा-सी भी ध्वनि दर्शकों तक पहुँचेगी तथा किसी अप्राकृतिक चिल्लाहट की आवश्यकता न होगी। साथ के कमरे के दृश्य दर्शकों की आँखों के सम्मुख न होते हुए भी माइक्रो पर सफलता से प्रदर्शित हो सकते हैं। इस नाटक में प्रत्येक दृश्य के सेटिंग इतने साधारण और सरल हैं कि प्रत्येक स्थान पर स्थानीय डाइरेक्टर इस सम्बन्ध में अपना निर्णय कर सकता है।

वीरदेव 'वीर'

Printed by A. Bose, at the Indian Press, Ltd.,
Benares Branch.

सामाजिक सेवा-क्षेत्र में जिनसे मैंने अनन्त शिक्षाएँ ली हैं--
जिनका दैवी उत्साह, प्रगाढ़ प्रेम, निःस्वार्थ सेवा-भाव
मुझे अपने अँधियारे जीवन-पथ पर सदा
प्रकाश देता रहा है, उन्हीं अपने
पितोपम प्रिय गुरुवर

श्री पण्डित श्रीरामजी वाजपेयी

नेशनल आर्गनाइज़िंग कमिश्नर हिन्दुस्तान
स्काउट एसोसियेशन इंडिया को यह
तुच्छ कृति सादर सप्रेम
समर्पित है।

प्राक्कथन

हिन्दी में अधिकतर नाट्य कृतियाँ साहित्यिक दृष्टि से की जाती हैं। वे साहित्य का ही शृङ्गार होती हैं रङ्ग-मञ्च का नहीं। रङ्ग-मञ्च के लिए उपयुक्त नाटक वही हो सकता है जिसकी भाषा साहित्यिक न हो बल्कि आम फहम हो। यह नाटक रङ्ग-मञ्च के लिए ही लिखा गया है। इसकी भाषा को साहित्यिक बनाने का प्रयत्न ही नहीं किया गया। आम बोलचाल की भाषा है जिसमें खूब हिन्दी और उर्दू का मिश्रण है। इसी दृष्टि से इसको पढ़ने की कृपा की जाय।

इस नाटक का कथानक सर्वथा सामयिक है। इसमें दो भाव विशेष-रूप से अङ्कित हैं, एक मनुष्य का मनुष्यत्व की ओर उभार और दूसरा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य का सम्पादन।

मनुष्यत्व से दूर होकर मनुष्य किस प्रकार अशान्ति एवं पशुता का साम्राज्य स्थापित कर सकता है, यह वर्तमान महायुद्ध प्रत्यक्ष रूप में सिद्ध कर रहा है। मनुष्य की प्रकृति अत्यन्त मृदु है। कभी-कभी क्षणिक ठेस से सोए अन्तरात्मा जाग उठे हैं। इस कथानक में इस सत्य का भी आभास है।

हिन्दुस्तान का बड़ा दुर्भाग्य यही है कि इसके निवासी भेदभाव की दीवारें बनाए एक दूसरे से दूर-दूर बैठे हैं। इसी कारण देश का सौभाग्य भी उससे कोसों दूर है। हिन्दुस्तानियत के भावों का हृदयों में सञ्चार ही देश के उद्धार का बड़ा साधन है। यह भाव भी इस नाटक का प्रबल सन्देश है।

यदि यह छोटा सा नाटक इस महा-उद्देश्य की सफलता में ज़रा भी सहायकारी हो सका, तो मैं अपने प्रयास को सफल मानूँगा।

नाट्य-कला बाल्यकाल से ही मेरी प्रियकला रही है। मेरे सूखे जीवन-क्षण को इसी कला-प्रेम ने हरित-सा रखा है। मैं जहाँ भी रहा हूँ

किसी न किसी नाट्य-समिति से सम्बद्ध रहा हूँ। नाटक-लेखन की भी मुझे रुचि रही है; परन्तु मेरे पहले प्रयास एकाङ्की नाटकों तक ही सीमित रहे हैं। त्र्याङ्की नाटक मेरा पहला ही प्रयास है।

मुझे प्रसन्नता है कि जनता ने इस नाटक को रङ्ग मञ्च पर पसन्द किया है। मुझे पूर्ण आशा है कि पुस्तिकारूप में भी इसको पसन्द किया जायगा। इसमें अनेक त्रुटियों की सम्भावना है। प्रेमी पाठक उनको प्रेम की दृष्टि से अनदेखी कर देंगे।

श्रीमती मञ्जुल अरोड़ा ने प्रेस के समर्पणार्थ इस नाटक की प्रति तय्यार करने में बहुत परिश्रम किया है। उनको मेरा हार्दिक धन्यवाद है।

दीपावली १९४३

वीरदेव 'वीर'

पात्र-सूची

डाक्टर कौल—आई० एम० एस० डाक्टर

वनिता—डाक्टर कौल की पुत्री

राधा—डाक्टर कौल की बहन

फ़िरोज़ पीछे मि० रहमान—पहले क़ैदी पीछे एक लखपति।

सुल्ताना—फ़िरोज़ की पुत्री।

मिस्टर खन्ना—मि० रहमान के मित्र।

सेठ तनसुखराय—कलकत्ता के एक लखपति सेठ।

मिस्टर बरकत—सेठ तनसुखराय के इँगलैंड से लौटे हुए पी० ए०।

मंगू—सेठ तनसुख का बेटा।

सोमा—सेठ तनसुख की बेटी।

मि० वाजिदअली—सी० आई० डी० इंसपेक्टर।

उमा—कलकत्ता की एक दुर्भिक्ष-पीड़ित निर्धन स्त्री।

मीना—उमा की पुत्री।

विनोद—उमा का पुत्र।

रामधन—मीना का चचा।

शीला—उमा की पड़ोसिन।

गुलाम—एक मिल-मज़दूर।

भिखारिणी—एक विचित्र भिखारिणी, जो दुर्भिक्ष-पीड़ितों की सहायता के लिए भीख माँगती फिरती है।

रियाज़—बर्दवान का एक दुर्भिक्ष-पीड़ित।

परवेज़—रियाज़ का पुत्र।

ज़ोहरा—रियाज़ की पुत्री।

अनिल—कलकत्ता का एक मध्यम श्रेणी का नागरिक।

कलकत्ता के बच्चे, मिठाईवाला, खिलौनेवाला, नौकर, सिपाही, कंपाउंडर नर्स इत्यादि।

प्रथम अंक

दृश्य १

स्थान—प्रार्थना-भवन

(नाटक के चुने-चुने पात्र ईश प्रार्थना करते हैं)

जग नैया के कर्णधार,
कर दो झँझरी नौका पार।
चलती भीषण बयार,
सूझत ना वार-पार,
बैठ गये चप्पू डार,
तुमरे हाथ है उद्धार। जग०.....

तड़प रहे दीन लोग,
भूख का लगा है रोग,
देश में बसा है सोग,
नाथ बहे सुख की धार। जग०.....

दूर करो अब लड़ाई,
हिन्दू मुसलमान भाई,
पाट दें दिलों की खाई,
आये हिन्द में बहार। जग०.....

(प्रार्थना के उपरान्त सब का प्रस्थान)

दृश्य २

(स्थान—मिस्टर कौल सिविल सर्जन का घर।
उनकी पुत्री वनिता उनकी प्रतीक्षा में डाइनिंग
टेबल सजा रही है और गुनगुना रही है)
समय नौ बजे रात

वनिता—(गाती है) पंछी रे तू चहक-चहककर बोल !
सूनी दुनिया की प्याली में,इक मिसरी सी घोल। पंछी रे०.....
मेघ घिरें जब कारे-कारे,
छिप जायें आशा के तारे,
छोड़ न दिल तू ऐ मतवारे,
जुट जा ताकत तोल! पंछी रे०.....
छोटा-सा जीवन है तेरा,
तिनकों का है बना बसेरा,
उलझ रहा है क्यों मन तेरा,
जगा दीप अनमोल! पंछी रे०.....
पापा अब तक आए नहीं। आज तो बहुत देर हो गई,

(सहसा बुनाई करते हुए मिस्टर कौल की
बहिन राधारानी का प्रवेश)

राधा—आज यह पहला दिन थोड़े ही है। यह तो रोज़ की झिक-झिक है।

वनिता—बुआ ! तुम पापा से नाराज़ क्यों रहती हो ?

राधा—नाराज़ न रहूँ तो क्या करूँ ? जब से रमा मरी है, गृहस्थी का सब बोझा मुझी पर आ पड़ा है। न होती तो राजा जी को आटा-दाल का भाव मालूम हो जाता। हज़ार बार समझाया है कि कुछ जमा बचत करो, पर सब कुछ बहरे कानों पड़ रहा है। न जाने पर-उपकार का क्या नशा सर पर सवार है ?

वनिता—पर-उपकार तो बुआ, बड़ा अच्छा गुण है। तुम्हें न जाने क्यों बुरा लगता है ?

राधा—पर-उपकार को कौन बुरा कहता है, लेकिन उपकार करने-वाले की कुछ औकात भी तो होनी चाहिए। औरों पर लुटाकर जो खुद भिखमंगा बन जावे उसकी घर-गृहस्थी कैसे चले ? एक तालाब और हज़ारों निकास की नालियाँ हों तो कब तक भरपूर रहेगा ?

वनिता—मुझे तो तुम्हारी बातें कुछ समझ नहीं आतीं बुआ।

राधा—समझ कैसे आये ? अपने बाप की ही तो बेटी है।

(सहसा मिस्टर कौल का प्रवेश। वनिता भागकर अपने पापा को पकड़कर कहती है)

वनिता—पापा ! बुआ तुम पर नाराज़ हो रही थीं। मुझे कहती थीं कि तू अपने बाप की ही तो बेटी है।

कौल—हाँ ! तो इसमें कुछ झूठ थोड़े ही है। वनिता अपने बाप की ही तो बेटी है।

राधा— बड़े मियाँ तो बड़े मियाँ, छोटे मियाँ सुबहानल्ला। बाप तो पर-उपकारी थे ही, अब बेटी को भी पर लगने लगे हैं। आज आस-पास की चमारियों-घसियारियों को चाय की दावत दी गई थी। बाप को ख़ैरातों से फ़ुर्सत नहीं। जो कुछ मिलता है सब उन्हीं में ख़तम हो जाता है। पहले एक हाथ से उड़ रहा था; अब दोनों से उड़ेगा।

कौल—देखो बहिन ! तुम घबराया न करो। घर-गृहस्थी के लिए जो चाहोगी मुयस्सर होता रहेगा। हाँ, लम्बा-चौड़ा बचाने के मैं हक में नहीं हूँ।

राधा—तो क्या नींव भी खोद डालोगे ? मैं तो भई, तुमसे बाज़ आई। (नाराज़ होकर जाने लगती है। कौल राधा को रोकने के लिए वनिता को इशारा करता है। वनिता भागकर बुआ को पकड़कर कहती है)

वनिता—बुआ! पापा को खाना खिलाकर जाओ। चलो छोड़ो बहस को। (राधारानी अनमनी-सी होकर लौटती है)

कौल—देखो राधे! आज मुझे एक ख़ास तोहफ़ा मिला है। तुम्हें याद है मैंने कोटा रियासत के एक मरीज़ का इलाज किया था। वह अपनी ज़िन्दगी से हाथ धोकर मेरे पास आया था। उसके केस में कोटा के महाराज की भी दिलचस्पी थी। भगवान् ने मदद दी और वह बिल्कुल तन्दुरुस्त होकर वापिस गया। आज कोटा के महाराज ने हमें एक सोने का शमादान भेजा है। उसमें कई क़ीमती जवाहरात जड़े हैं। जौहरियों का ख़याल है कि उसकी क़ीमत पचास हज़ार से कम नहीं।

वनिता—(ख़ुशी से उछलकर) सच पापा! कहाँ है वह?

कौल—अभी मैं अपनी स्टडी में रखकर आया हूँ।

वनिता—ओ! (स्टडी की तरफ़ भागती हुई जाती है। कौल उसकी तरफ़ मुस्कराते हुए देखते रहते हैं।)

कौल—(राधा से) देखो राधे! संसार में कोई भी किया हुआ काम रायगाँ नहीं जाता। हमारा एक-एक लफ़्ज़, एक-एक भाव, एक-एक काम संसार में एक हलचल पैदा करता हुआ चला जाता है, और हमारे पास किसी न किसी शकल में लौट आता है।

(शमादान लिये हुए वनिता का प्रवेश)

वनिता—sweet, excellent, beautiful. पापा! इसको मैं अपने कमरे में रखूँगी।

कौल—रख लेना।

राधा—(व्यङ्ग से) और किसी वक्त अपनी चमारिन सहेली बुधिया को दे डालना।

वनिता—यह तो मैं किसी को सर की क़ीमत पर भी न दूँ।

(कौल और राधा कहकहा लगाते हैं)

अब तो ख़ुश हो गई न बुआ?

राधा—(चपत लगाकर) खुश हुई तेरा सर।

(कौल वनिता कहकहा लगाते हैं। वनिता नकली रूठकर अपनी कुर्सी पर बैठती है)

कौल—अच्छा भई! खाना मँगवाओ। मुझे जल्दी वापिस पहुँचना है।

(राधा पुकारती है)

राधा—नन्दो! खाना ले आ!

(धीमी-धीमी सी ट्यून बजती है। एक नौकर तौलिया, जग, चिलमची लिये हुए हाथ धुलाता है)

वनिता—पापा! यह शमादान खालिस सोने का है?

कौल—हाँ बिटिया।

वनिता—यह रङ्गदार काम कैसा है?

कौल—यह जयपुर की मीनाकारी है।

(नौकर गिलास रखता है और उनमें पानी भरता है)

राधा—इसमें खालिस जवाहर जड़े हैं?

कौल—हाँ।

राधा—बहुत क़ीमती चीज़ है।

(खाना आता है। तीनों खाने लगते हैं)

(खाना खाते हुए)

वनिता—पापा! यह बिक नहीं सकता?

कौल—क्यों नहीं? इस पर तो सभी जौहरी लट्टू हैं।

वनिता—तो बेच दो इसे पापा! कहीं कोई चुरा न ले।

राधा - (व्यङ्ग से) इस घर के घड़े में दो छेद हैं। बिका तो बस खतम हुआ।

वनिता—नहीं बुआ! इसकी एक-एक पाई मैं सँभालकर रखवाऊँगी।

कौल—अब बनी है तू बुआ की बेटी। (कहकहा)

राधा—तो जमा करना क्या कोई बुरी चीज़ है?

कौल—देखो राधे ! इस निन्यानबे के फेर में दुनिया भर पड़ी है। जमा करके भी क्या कभी किसी का पेट भरा है ? यह जमा करने की लालसा अपनी आहुतियाँ पा-पाकर और भी ज्यादा लपलपाने लगती है। इस लालसा का कोई अन्त नहीं। चिता में ही जाकर इसका अन्त होता है।

राधा—देखो मुकुल ! तुम्हारी ये बातें मुझे मतवाले की बहक मालूम देती हैं। तुम्हारे दिमाग़ पर परोपकार का नशा सवार है। आज उसकी धुन में तुम अपना सब कुछ लुटा रहे हो। कल अगर तुम्हारे पास चार पैसे न हों तो दुनिया तुम्हारे उपकार के गीत नहीं गाएगी और न तुम्हीं यश के लड्डू खाकर ज़िन्दा रह सकोगे। तुम एक ख़याली दुनिया में रह रहे हो। असली दुनिया से बहुत दूर—

(सहसा नन्दो के हाथ से प्लेट्स छूटकर गिर पड़ती हैं। उनके चकनाचूर होने की आवाज़ निकलती है। डाइनिंग रूम के एक दरवाज़े पर फ़िरोज़ खड़ा है। फटे क़ैदी के कपड़े। बिखरे बाल। बढ़ी हुई दाढ़ी। प्लेट्स टूटने की आवाज़ के साथ ही नन्दो चिल्लाकर बोलती है—)

नन्दो—चोर ! (हाथ ऊपर उठे हुए। सहमकर एक तरफ़ खड़ी हो जाती है। कौल, राधा और वनिता की नज़र उसकी तरफ़ जाती है, फिर दूसरे दरवाज़े पर खड़े फ़िरोज़ की तरफ़। फ़िरोज़ को देखते ही राधा और वनिता, घबराई हुई, खाना छोड़कर, मिस्टर कौल के पीछे डरकर खड़ी हो जाती हैं।)

फ़िरोज़—(गूँजती आवाज़ में) मैं चोर नहीं हूँ।

राधा—उचक्का कहीं का ! सीधा अन्दर घुस आया है, और फिर कहता है "चोर नहीं हूँ"।

वनिता—पापा ! निकालो इसे बाहर।

कौल—ज़रा ठहरो। पूछ तो लेने दो बेचारे से।

राधा—क्या चोर भी कभी कहता है कि मैं चोर हूँ ?

नन्दो—यह चोर है बाबू ! अभी कुछ देर हुई मैं बाज़ार कुछ लेने गई थी। लड़के इस जङ्गली के पीछे तालियाँ बजाते घूम रहे थे।

फ़िरोज़—मैं जङ्गली नहीं हूँ। मैं ख़ूँख़ार दरिन्दा नहीं हूँ। मैंने किसी को नोच कर नहीं खाया। मैंने किसी का कुछ बिगाड़ा नहीं है।

राधा—निकल जा बाहर भिखमंगे!

वनिता—पापा! इसे निकालो। मुझे डर लगता है।

कौल—धत् पगली! तुझे डर क्यों लगता है? इन्सान से इन्सान भी डरता है?

राधा—तो बुलाओ इसे अपने पास। दावत खिलाओ। हम तो जाती हैं।

(यह कहकर डरी हुई और नफ़रत-भरी निगाहों से देखती हुई वे बाहर चली जाती हैं)

कौल—(उठकर, फ़िरोज़ की तरफ़ जाते हुए) कहो भाई! कौन हो तुम?

फ़िरोज़—मैं एक दुनिया से ठुकराया हुआ बदक़िस्मत "क़ैदी"। लम्बी क़ैद का सज़ावार। बड़ा दर्दनाक क़िस्सा है मेरा। मेरी भी कभी इज़्ज़त थी, धन था, कुनबा था। आज मेरा कुछ भी नहीं। यहीं इसी शहर में पैदा हुआ, पला, बड़ा हुआ। मैं अपने माँ-बाप का इकलौता बेटा था। फिर ज़िन्दगी में एक भूचाल आया। (आँखों में आँसू छलकने लगते हैं)

कौल—अपनी ज़िन्दगी में न जाने कितनी बार हमें बारूद पर चलना पड़ता है। (फ़िरोज़ के कन्धे पर हाथ, धरता है) हाँ, तो क्या हुआ?

फ़िरोज़—यहीं शहर के बाहर जो शेख़ों का बड़ा बाग़ीचा है उसका मैंने ठेका लिया था। अभी आमों पर बौर आ रहा था। मैं घर छोड़कर बाग़ीचे के झोंपड़े में सोने लगा था। और रखवालों को मैंने मुक़र्रर नहीं किया था। उस साल बहुत आम लगनेवाला था। बहुत कुछ मिलने की उम्मीद थी। मेरा बाप मुझ पर फ़ख़र करता था। अपनी

बीबी फ़ातिमा की वह पुरदर्द नज़र मुझे अब तक नहीं भूलती। मुझे शहर से दूर, घने बाग़ में, अकेला सोते देखकर उसका कलेजा धड़क उठा था। मेरी नन्ही-सी सुल्ताना। उसका तोतली आवाज़ में मुझे "अब्बा" बुलाना। हाय—(फूट-फूटकर रोने लगता है)

कौल—पर उस बहिश्त से तुम जेल के दोज़ख में कैसे आ पहुँचे ?

फिरोज़—एक रात मैं सो रहा था। मेरे बाग़ के सब आम फल उठे थे। मैं उनको छकड़े में भरकर मण्डी की तरफ़ जा रहा था। वे सुनहरे आम। वह सुनहरा दिन। अचानक छकड़े का एक पहिया एक गड्ढे में पड़ गया। छकड़ा उलट गया। ठीक जुए के नीचे मेरी गर्दन आ गई। मैं झल्ला उठा। मेरी नींद टूट गई। मैंने देखा उस अँधेरी रात में, मैं अपनी झोंपड़ी के एक कोने में पड़ा हुआ हूँ। किसी का आहिनी पञ्जा मेरी गर्दन को दबोचे हुए था। मैं चिल्ला उठा। मैंने समझा, कोई भूत है। मेरे हाथों में न जाने कहाँ से ताक़त आ गई। मेरे हाथ उसकी गर्दन पर जा पड़े। उसके हाथ ढीले हो गये। किसी चीज़ के निकलने की आवाज़ आई। मैं समझ गया पिश्तौल था। उस अँधेरे में मेरे हाथों को आँखें लग गई थीं। वे फिर उसके पञ्जों से उलझ गये। अचानक धमाका हुआ। बारूद के धुएँ से दम घुटने लगा, पर वे पञ्जे ढीले हो गये। उलट-कर वह ज़मीन पर लोट-पोट हो गया। मैं हैरान था। मैंने उठ-कर दिया जलाया। धुँधली रोशनी में मैंने ख़ून से लथपथ उस लाश को देखा। हाय! वह मेरा पड़ोसी हमीद था। उस बाग़ का ठेका न पाकर उसके दिल में हसद की आग सुलग उठी थी। मैं वहीं सर थामकर बैठ गया। मेरे पाँव कई मन के हो गये। क्या होगा? मेरी फ़ातिमा का क्या होगा? मैं हिम्मत की गठरी उठा-कर घर की तरफ़ चला। पर हाय! वहाँ वह नज़्ज़ारा देखा जिसने मुझे ज़िन्दा ही मुर्दा बना दिया।

कौल—क्या नज़्ज़ारा था वह ?

फ़िरोज़—उस सुनसान घर में तीन लाशें ख़ून में सराबोर पड़ी थीं, मेरे बाप की, माँ की, और फ़ातिमा की। सिर्फ़ मेरी बच्ची सुल्ताना बचपन की मीठी नींद में पड़ी मुस्करा रही थी। मुझे कुछ नहीं सूझा। मैं क्या करूँ? मैंने थाने में जाकर अपने आपको हवाले कर दिया।

कौल—तुम्हारे साथ तो ग़ज़ब हुआ भाई! तुम्हें क्या सज़ा मिली?

फ़िरोज़—लम्बी क़ैद! आज उसी से छूटकर आ रहा हूँ।

कौल—तुम्हारी बच्ची तो ज़िन्दा थी। उसका कुछ पता?

फ़िरोज़—कुछ पता नहीं।

कौल—तुम्हारा घर?

फ़िरोज़—आज वह एक ईंटों का ढेर है। आज इस दुनिया में मेरा कोई घर नहीं, मेरा कोई अपना नहीं। बेमतलब और फ़ालतू बनकर आज मैं जेल से निकल आया हूँ। यह कपड़े, यह बाल, यह दाढ़ी, सब मेरे दुश्मन हैं। मेरे लिए दुनिया भर के दरवाज़े बन्द हैं। आज तीन दिन से मैंने कुछ नहीं खाया। आपकी तारीफ़ सुनकर आपके दरवाज़े पर आया हूँ। देख लीजिए; अगर मुमकिन हो तो दो टुकड़े रोटी और रात पड़ रहने के लिए कोई कोना मुझे दे दीजिए।

कौल—ऐ अजनबी! तुम्हारी बेबसी ने मुझ पर बड़ा असर किया है। मेरे घर का दरवाज़ा तुम्हारे लिए खुला है। आओ बैठो (कुर्सी पर बिठाता है, और नौकर को पुकारता है) बैजू।

बैजू—(दाख़िल होकर) हाँ! हजूर।

कौल—एक थाल खाना लाओ।

बैजू—बेहुत अच्छा हजूर (खाना लाने जाता है)

कौल—(फ़िरोज़ के पास बैठते हुए) एक तूफ़ानी झोंके ने तुम्हें तनहाइ की लम्बी गुफा में धकेल दिया था। लम्बी क़ैद के बाद तुमने एक नई दुनिया देखी, बदहवास, ख़ुदग़र्ज़, और जल्लाद! क्या तुमको कोई पुराना वाक़िफ़ नहीं मिला?

(नौकर खाना ले आता है और एक तरफ़ खड़ा रहता है)

फ़िरोज़—(रहस्यमय हँसकर) पुराने वाक़िफ़ ? उन्होंने देख-कर भी नहीं देखा, पहिचानकर भी नहीं पहिचाना। उन्होंने मुझ पर तालियाँ बजाईं, मुझे मतवाला कहकर बच्चों और कुत्तों को मेरे पीछे छोड़ा।

कौल—ऐसी ही है दुनिया। सच कहा है—"चलती का नाम गाड़ी है"। खाना खाइए। (नौकर से) देखो मेरे बराबरवाले कमरे में इनके लिए बिस्तर बिछाओ। मेरा नाइट सूट पास रख देना।

नौकर—बहुत अच्छा। (जाता है)

(मध्यम ट्यून के साथ-साथ कौल और फ़िरोज़ बातें करते नज़र आते रहते हैं। आहिस्ता-आहिता परदा गिरता है)

दृश्य ३

(कलकत्ता के लखपति सेठ तनसुखराय के बँगले में दफ़्तर के बाहर का बरामदा। सेठ तनसुख और उनके पी० ए० मि० बरकतराम परस्पर बातचीत करते प्रवेश करते हैं। समय प्रातः १० बजे)

तनसुख—बोलो बोलो आज का बाज़ार भाव। कहाँ है आज का अख़बार ?

बरकत—ए हें ! अख़बार ? मैं अभी लाया।

तनसुख—कैसे बूदम हो। मेरे पास बग़ैर अख़बार के आने का क्या मतलब ? जाओ, अख़बार लाओ।

(बरकत जाता है)

तनसुख—इस गधे ने विलायती अँगरेज़ी पढ़के भी कुएँ में डाल दी। इसको हज़ार बार समझाया है कि अपनी दुम की जगह अख़बार को ही लटकाये लाया कर; पर इस अहमक़ की याद पर तो पाला पड़ा हुआ है।

(बरकत अख़बार लिये आता है)

बरकत—देखिए सेठ जी, आज का बाज़ार भाव ८) मन है।

तनसुख—तो ख़रीदो, ख़रीदो, आँखे बन्द करके ख़रीदो।

बरकत—पर अगर कल भाव गिर गया तो? देखिए इकोनौमिक्स (economics) की रू से—

तनसुख—ईकनामिक, ईकनामिक, यह जो अँगरेज़ी के लफ़्ज़ तुमने घोटकर पिये हैं, इनके लिए जमालगोटा इस्तेमाल करो। तुम मेरे पी० ए० न होकर अगर किसी कालिज में प्रोफेसर होते तो तो गुज़ारा हो जाता। कैसी बद-सगुनी कर रहे हो कि भाव क गिरने की बात कह रहे हो।

बरकत—ओह! आई ऐम सारी, सेठ साहब! जहाँ तक मेरा दिमाग़ काम करता है, अब तो भाव बढ़ेगा ही।

तनसुख—बस बस अब चोखा कहा तुमने।

(कमरे में टेलीफोन की घण्टी बजती है)

देखो देखो किसका टेलीफोन आया?

(बरकत जाता है)

(टेलीफोन का रिसीवर उठाकर)

बरकत—हैलो! . कौन? ...सेठ केदारनाथ मंगतराम? ... हाँ कहिए...क्या गेहूँ?...हाँ! क्या भाव?... ९) मन?...बाज़ार तेज़ी पर है?... हाँ कितना माल है?... १०००० टन? ... अच्छा, सेठजी से पूछकर बताता हूँ।...होल्ड कीजिए।

(रिसीवर को मेज़ पर रखने की आवाज़ आती है। सेठ तनसुख इधर से उधर हरेक लफ़्ज़ पर विचार और चिन्ता की मुद्रा बनाते हुए घूमता है।)

तनसुख—(बरकत के समीप आने पर झुंझलाकर) सेठजी से पूछ लूँ। सेठजी से पूछने की क्या बात है? माल ख़रीदते जाओ। जिस भाव पर मिले ख़रीदते जाओ। बोल दो सौदा मंज़ूर है।

(बरकत वापिस कमरे में जाता है, रिसीवर उठाता है और बोलता है —)

बरकत—सेठ जी ! सौदा मंजूर है। यह माल अब हमारा हुआ। भिजवा दीजिए।

(वापिस बरामदे में लौट आता है)

तनसुख—मिस्टर बरकत ! आज के सौदों की तफसील तो सुनाओ।

बरकत—लीजिए सुनिए। मैसर्स बैजनाथ किशोरीलाल से दस हज़ार टन। मैसर्स रामलाल रामकिशन से ८ हज़ार टन। मैसर्स गोयनका ब्रादर्स से ९ हज़ार टन। मैसर्स भगतराम मोहनलाल से १० हज़ार टन। मैसर्स केदारनाथ मंगतराम से १० हज़ार टन।

तनसुख—बस बस मिस्टर बरकत ! सारी मार्केट का माल अब हमारे गोदाम में है। बस अब इसको तहख़ानों में स्टाक करवा दो। अब यह माल तभी बाहर निकलेगा जब भाव १४)-१५) मन होगा।

बरकत—पर अगर सरकार को पता लग गया तो ?

तनसुख—ओ हो हो ! कैसी फ़ज़ूल बात करते हो ? सरकार क्या, सरकार के बाप को भी पता नहीं लग सकता।

(टेलीफोन की घण्टी बजती है। बरकत टेलीफोन सुनता है। तनसुख ध्यान लगाये और एक-एक लफ़्ज़ पर ऐक्ट करते हुए इधर से उधर चलता है।)

बरकत—हैलो !.. कौन ? ...सेवा समिति ?...कहिए...आप एक लङ्गर लगवा रहे हैं ?...ग़रीबों के लिए ?...ठीक है...ठीक है... बाज़ार में कहीं थोक माल नहीं मिलता ?.. लाचारी है.. सेठ जी से पूछकर बताता हूँ...

(रिसीवर को मेज़ पर रखने की आवाज़)

तनसुख—(त्योरियाँ चढ़ाकर) फिर सेठ जी से पूछकर बताता हूँ !

(बरकत आता है) मुझसे पूछना क्या है ? कह दो कोई स्टाक नहीं। हाँ·· (आहिस्ता से) ज़रा अच्छी तरह कहना। बहुत लाचारी है·· सेवा समिति के काम में मदद देना तो पुण्य का काम है···पर क्या किया जावे ?

(बरकत कमरे में जाता है। फिर रिसीवर उठाता है और बोलता है)

बरकत—हैलो···देखिए···मैंने सेठजी से पूछा है···सेवासमिति से तो उन्हें दिली उन्स है···पर स्टाक बिलकुल नहीं। (रिसीवर रख देता है)

(सहसा सेठ के पुत्र मङ्गू राम का प्रवेश)

मङ्गू—बापू! बापू! मेरी आज स्कूल में पिटन्त हुई। मुझे किताबें नहीं ले दीं अब तक।

(बरकत का प्रवेश)

तनसुख—किताबें कहाँ से ले दूँ तुझे?···काग़ज़ का तो स्टाक ही कहीं नहीं बचा।

बरकत—गुस्ताख़ी माफ़ हो सेठ जी। पर किताबों और काग़ज़ के स्टाक का आपस में क्या रिश्ता?

तनसुख—वही रिश्ता जो बाप और बेटे का हो। काग़ज़ न हो तो किताबें कैसे छपें?

बरकत—पर किताबें तो छपी हुई बाज़ार में मिल रही हैं।

मङ्गू—हाँ-हाँ बापू, मिल रही हैं। पैसे लाओ पैसे, मैं ख़ुद ख़रीद लाऊँगा।

तनसुख—कितने पैसे चाहिएँ तुझे?

मङ्गू—यही दस रुपये।

तनसुख—(झल्लाकर) दस रुपये? पाँचवीं जमात में पढ़ रहा है और दस रुपये की किताबें! ये किताबोंवाले; माँ-बाप की उल्टे उस्तरे से हजामत बना रहे हैं। बस छोड़ दे पढ़ाई। हम भी तो पढ़े हैं। महीने भर के बाद ३ कौड़ियाँ देते थे, तीन कौड़ियाँ।

बरकत—पर सेठजी, अब ज़माना बदल गया है। अब न वैसे पढ़नेवाले हैं न पढ़ानेवाले।

तनसुख—तुम्हारे-जैसे ही तो पढ़कर निकलते हैं—

पढ़े फ़ारसी बेचें तेल—हो जावें दुनिया में फेल।

(क़हक़हा लगाता है)

बरकत—अजी सेठ साहब! मैं क्या नालायक़ हूँ, जो कुछ हैं सो आप ही हैं।

(मीठी-सी हँसी हँसता है)

मङ्गू—निकालो पैसे बापू!

तनसुख—फ़ज़ूल में आकर काँय-काँय करने लगा। अच्छा ले जान छोड़।

(जेब में से रुपये निकालकर उसे १—२—३—१० तक गिनकर देता है। मङ्गू उछलता हुआ जाता है)

तनसुख—(क़हक़हा लगाकर) तुम्हारेवाले सभी खोटे रुपये दे दिये हैं। चल ही जावेंगे।

बरकत—हाय ग़ज़ब! वे कैसे चलेंगे? वे तो ठिकरिया थे।

(सहसा सेठजी की बेटी सोमा का प्रवेश)

सोमा—बापू! बापू! भैया दस रुपये ले गया है किताबों को। मुझे साड़ी मँगवा दो।

तनसुख—साड़ी मँगवा दो! पहले शकल तो बनवाओ!

(कमरे में टेलीफ़ोन की घण्टी बजती है। बरकत जाता है। तनसुख ध्यान से सुनता है)

बरकत—हैलो···कौन है?··· क्या ज़रूरत है?···गेहूँ का स्टाक?··· किसको?···रिलीफ़ सोसायटी?···देखिए हमारे पास बिल्कुल स्टाक नहीं है। माफ़ फ़र्माइये। आदाब···।

(रिसीवर रख देता है)

तनसुख—(बरकत के आने पर) अब देखो कैसे भाव नहीं चढ़ेगा? बाज़ार में एक दाना नहीं छोड़ा। अब तो इमारे दुगुने-तिगुने होंगे।

बरकत—दुगुने-तिगुने होंगे अगर बचे रहे तो।

तनसुख—फिर वही ऊटपटाँग बात।

बरकत—देखिए सेठजी, मेरा कलेजा तो धक-धक कर रहा है। अगर कहीं पुलिस की नज़र पड़ गई तो—

तनसुख—पुलिस—पुलिस! देखो मिस्टर बरकत, तुम यहाँ से चले जाओ। तुमको पुलिस पुलिस करते डर नहीं लगता। तुम ख़ुद पुलिस को बुला रहे हो।

बरकत—सेठ साहब! देखिए अब मेरे साथ सौदा कीजिए, नहीं तो—

तनसुख—(काटकर) बस-बस आगे मत बोलना। मैं तुम्हारा सब मतलब समझता हूँ, सब मतलब समझता हूँ।

बरकत—हाँ, तो साफ़-साफ़ बता दीजिए वर्ना—

तनसुख—बस-बस, आगे मत बोलना मिस्टर बरकत! तुम्हारा रुपये में चार आने हिस्सा ठहरा। तनख्वाह भी दुगनी।

बरकत—अच्छा लिखत में दे दो, सेठ साहब! वर्ना—

तनसुख—बस-बस, आगे मत बोलना नहीं तो मेरा दिल—

(दिल पर हाथ रखता है)

बरकरत—यह बात? ओह यह तो कैटोस्ट्रफी होगी।

तनसुख—मुझे बचाओ मिस्टर बरकत—मैं सब ठीक कर दूँगा।

बरकत—अच्छा-अच्छा, तो मैं जा रहा हूँ।

तनसुख—अच्छा-अच्छा, (लम्बी साँस लेता है) (बरकत के बाहर चले जाने पर) ओहो! स्टाक तो कर लिया, पर अब क्या बनेगा?

सोमा—(फिर से आकर) बाबू! मेरी साड़ी?

तनसुख—चल चुड़ैल कहीं की! तेरे कफ़न की साड़ी बनाऊँगा। जा—

(चपत लगाता है। सोमा रोती हुई जाती है)

तनसुख—कैसी आफ़त है! कहीं इस गधे की मेहरबानी से जेल न जाना पड़े। कोई मुझे इस पढ़े-लिखे पिस्सू से बचाये।

(जाता है)

दृश्य ४

(डाक्टर कौल के बँगले का एक कमरा। कमरे के ठीक मध्य में एक दरवाज़ा है जो डाइनिंग रूम में खुलता है। उसमें से डाइनिंग रूम का मेज़ और उस पर पड़ा शमादान नज़र आ रहा है। एक ओर पलँग पर फ़िरोज़ बैठा है। समय एक बजे रात्रिकाल)

फ़िरोज़—रात गुज़रने को आ गई। नींद ने आने का नाम नहीं लिया। हलचल, एक अजीब हलचल! यह क्या है? न जाने मेरे दिल की ख़ाहिशें एक तूफ़ान बनकर उठ आई हैं। ख़ाहिशें !.....

(उठ कर टहलने लगता है)

नहीं-नहीं, दुनिया के ठुकराये हुए मुसाफ़िर! तेरी क़िस्मत में ठोकरें ही लिखी हैं, ठोकरें...

(फिर विचार-मग्न इधर-उधर घूमता है। सहसा उसकी दृष्टि खिड़की से बाहर दूर पूर्वाकाश में उगती लालिमा पर पड़ती है) सुबह होगी सुहावनी, उम्मीदों से भरी हुई। पर तुम्हारी उम्मीदें क्या हैं? दुनिया की नदी उसी तरह इठलाती हुई बहने लगेगी। तुम एक तनहा चट्टान की तरह खड़े हुए उससे कब तक टकराओगे।

(फिर टहलता है। अकस्मात् उसकी दृष्टि दूसरे कमरे में दीख रहे शमादान पर जा पड़ती है। उसके हृदय में चुरा लेने की कुभावना जागृत हो उठती है। वह काँप उठता है)

यह क्या! कमीने! तेरे दिल में यह ख्याल क्यों आया? चोर! पाजी! तेरी जगह जेल के सीखचों के पीछे ही है। जेल की दीवारों ने तेरी इन्सानियत को चूस लिया है। तू एक हैवान है। अश, अश! जिसने तुझ पर एहसान किया उससे यह सलूक? ऐ दिल के अन्धे! आँखें खोलकर देख! तू किधर जा रहा है?

(मायूसी से एक तरफ़ सहारा लेकर सोचने लगता है। उसकी मनोधारा की आवाज़ आती है—)

मनोधारा—मतवाले! तेरे लिए और कोई रास्ता नहीं। सुबह के साथ ही साथ तेरा यह बहिश्त गायब हो जावेगा। कहाँ जावेगा तू? नादार—बेबस—कङ्गाल! मौक़ा है—यह शमादान चुरा ले।

फ़िरोज़—लानत है तुझ पर, ऐ उल्टे सलाहकार! (सर को दोनों हाथों के बीच में थामकर) मेरे हाँथ में अगर आहिनी हथौड़ा होता तो तुझे चूर-चूर कर देता। नहीं—नहीं—फ़िरोज़ से यह न होगा। चल—चल-अभी यहाँ से भाग निकल।

(विचार की मुद्रा में खड़ा होता है। पुनः मनोधारा की ध्वनि सुनाई देती है)

मनोधारा—भोले! क्या सोचता है? ऐसा सुनहरा मौका कम ही मिलता है। सोने का शमादान, और कोई खुला और गैरमहफ़ूज़ छोड़ दे। यह मौक़ा क़ुदरत ने तुझे दिया है। यह शमादान तेरे लिए ही रक्खा गया है।

फ़िरोज़—(व्यग्रता से) छोड़ दो मुझे, छोड़ दो; ज़हरीली ख़ाहिशो, क्यों सर पर सवार हो रही हो? छोड़ दो मुझे। मेरा दम घुटा जा रहा है। मैं अपने को कमज़ोर महसूस कर रहा हूँ। छोड़ दो मुझे। एहसान का यह बदला? नहीं-नहीं (सोचते-सोचते घूमता है। सहसा उसकी आँखों में अङ्गारे नज़र आने लगते हैं)

मनोधारा—एहसान? किसका एहसान? तुझे धूल में मिलाया दुनिया ने। तुझे किसी ने पूछा तक नहीं। ख़तरनाक 'कल' तेरे सामने है। सवाब, बहिश्त, यह सब धोका है। तेरा हाल ही तेरा बहिश्त है। इससे तू मालामाल हो जावेगा। फिर तेरा कुन्बा, तेरा घर, तेरी नई दुनिया। (वह बढ़ने लगता है) चल—चल (वह और आगे बढ़ता है) उठा—उठा (उठाने लगता है। त्रस्त हो पीछे हट जाता है) डर मत! एक लम्हा, एक क़दम तुझे बादशाह बना देगा। उठा—

(वह शमादन उठाकर बाहर की तरफ़ चलने लगता है)

फ़िरोज़—ठहर-ठहर; रख दे। अगर पता लग गया?

मनोधारा—नहीं।

फ़िरोज़—अगर पकड़ा गया?

मनोधारा—नहीं—चल-चल।

(वह तेज़ी से चलता है। साथ ही साथ तीव्र वाद्य होने लगता है। उसके बाहर होते ही किसी चीज़ के गिरने से खटाके की आवाज़ होती है। इसी समय मिस्टर कौल डाइनिंग रूम के दरवाज़े पर नज़र आते हैं। ऐसे खड़े हैं जैसे सपने से जागकर आये हों। बाहर ले कमरे में पूर्ण अन्धकार है। पिछले कमरे के मध्य ज्योति की धुँधली-सी झलक बाहर तक आ रही है।)

कौल—यह कैसी आवाज़ थी? आहिस्ता चलूँ। बेचारा अजनबी जग न जाए! (आगे बढ़ता है। दरवाज़े पर पहुँचकर देखता है)

आवाज़ यहीं से आई थी। यह दर्वाज़ा खुला है। क्या कोई बाहर गया? (लौटकर, फ़िरोज़ के बिस्तर के पास जाकर) बिस्तर खाली। (घड़ी देखता है) तीन बजे हैं। (सोचता है) उठकर कहाँ गया? क्यों गया? कुछ समझ में नहीं आया।

(सहसा राधारानी और वनिता का प्रवेश)

राधा—यहाँ खड़े-खड़े क्या कर रहे हो? मुझे तो अभी बन्नो ने जगा दिया। कहने लगी—"बुआ! मुझे पापा के बारे में बड़ा डरावना सपना आया। चलो पापा के पास।"

वनिता—पापा! मुझे बड़ा डरावना सपना आया। अन्दर चलो तो सुनाऊँ। यहाँ तो.....हैं! यह क्या?...पापा! वह कैदी कहाँ है?

राधा—हैं! भाग गया न चोट्टा।

कौल—हाँ भाग गया। बहुत बुरा हुआ राधे! वह भाग गया।

राधा—ज़रूर कुछ चुराकर ले भागा होगा।

कौल—हाँ! वह शमादान ले गया है।

राधा—वह शमादान तो तुमने पेटी में रख लिया था।

कौल—नहीं, उसे मैंने डाइनिंग टेबल पर ही छोड़ दिया था।

वनिता—यह क्यों पापा ? तुमने शमादान मेज़ पर क्यों रहने दिया ? उस चोट्टे के लिए ?

कौल—नहीं ! मैं उसको रखना भूल गया। मुझे यक़ीन था कि वह बदक़िस्मत बुराई के दोज़ख से पाक और सुथरा होकर निकला होगा। यह चोरी नहीं, बिटिया ! यह बेबसी है, यह लाचारी है, यह ग़रीबी का कलङ्क है।

राधा—तुम्हारा दिमाग़ तो हमेशा हवाई घोड़ों की सैर किया करता है। ग़रीबी, लाचारी, बेबसी ! तुम्हारी ज़िन्दगी एक शेख़चिल्ली का पुलाव है। जिसको चाहे घर में बुलाया, खिलाया, सुलाया और लुटाया।

वनिता—पापा ! बुआ सच तो कहती हैं। आपने उसका भला किया, उसने उसके एवज़ में क्या किया ? मैंने सपने में भी यही देखा था कि वह क़ैदी कटार निकालकर तुम पर वार कर रहा था। मैं काँपकर जाग उठी पापा !

राधा—साँप को हज़ार दूध पिलाओ डसेगा ही।

कौल—तुम धुँधली आँखों से देखती हो इस मसले को देखो—अगर तुम, मैं या कोई बड़े से बड़ा धर्मात्मा भी उसके जैसे हालात में होता तो ऐसा ही करता। मुझे फ़िक्र है कि उसका क्या होगा ? बदक़िस्मत कहीं फिर पकड़ा न जाए।

वनिता—पापा ! अगर वह पकड़ा गया तो—

राधा—तो अगला-पिछला हिसाब सब बेबाक़ हो जावेगा।

कौल—तो (सोचकर) मुझे कुछ करना होगा।

वनिता—क्या पापा !

कौल—यही तो सोच रहा हूँ। (सोचने का नाट्य करता है)

(परदा गिरता है)

दृश्य ५

(कलकत्ता के समीप एक नई आबादी में श्री तुषारकान्ति घोष का बँगला। उनकी पुत्री ललिता के निमन्त्रण पर वसन्तोत्सव मनाने के लिए बच्चों का जमघट। बँगले के लान में मिष्टाहार के उपरान्त बच्चे दायरा बनाकर नाच रहे हैं तथा गा रहे हैं। समय मध्याह्न)

गाओ-गाओ वसन्त बहार—
ज़र्रा-ज़र्रा खिला जगत का
महँक उठा आँगन जग भर का,
छूटी .खुशी-फुहार—गाओ०
रङ्ग-बिरङ्गे पहने बाने;
मस्ती में होकर दीवाने,
झूमें सब नर-नार—गाओ०
ऋतु-पति ने दरबार सजाया,
सुन्दरता का राज्य जमाया,
देने को सुख-सार—गाओ०

(गाने के उपरान्त)

ललिता—आज कैसा सुहावना वसन्त का दिन है। दिल चाहता है कि गाते और नाचते ही रहें।

माधुरी—आज तुमको तो स्प्रिंग लगे मालूम देते हैं। उछलती ही जा रही हो।

सुनन्दा—कहीं फूल मुस्करा रहे हैं, कहीं वृक्ष झूम रहे हैं, कहीं पक्षी अपने मीठे सुर अलाप रहे हैं।

वागेश्वरी—वाह-वाह कवयित्री जी, कैसा मनोरम वर्णन किया है।

ललिता—क्या कहना, वागेश्वरी देवी! तुम्हारा तो नाम ही जो कविता है।

माधुरी—आज का वसन्त कुछ फीका-फीका मालूम हो रहा है।

सुनन्दा—क्यों ?

माधुरी—क्योंकि आज हमारी कई सखियाँ आईं ही नहीं।

ललिता—अभी क्या दिन बीत गया है ? अभी तो आने का ताँता लगा ही है। (बाहर की ओर देखकर) लो, वह आ गया नटखट टोला।

(क़हक़हे लगाते हुए दयाल, मलिक, सागर, ललित का प्रवेश)

बस आ गये हँसी का तूफ़ान साथ लेकर। क्या बात है ? क्यों इतना हँसे जा रहे हो ?

दयाल—कुछ न पूछो बहिन ! आज वह लाजवाब नज़्ज़ारा देखा कि लाखों रुपये देकर भी नसीब न हो।

मलिक—ग़ज़ब का, बस ग़ज़ब का।

सागर—अगर कहीं हमारी बहिनें साथ होतीं तो हँस-हँसकर गुलदस्ता बन गई होतीं।

ललित—बेशक।

ललिता—पर बात क्या है ?

दयाल—बात ? (हँसता है) तो लो सुनो। हम अभी रास्ते में आ रहे थे कि एक गधे ने रेंकना शुरू किया। उसको रेंकते सुनकर कुत्ता भूँकने लगा। दरख़्त पर बन्दर बैठा था। उस शरारती ने धम्म से गधे की पीठ पर छलाँग लगाई। गधे ने बेतहाशा दुलत्ती जमाई जो ठीक कुत्ते की थूथनी पर जा बैठी। बस नज़्ज़ारा ठीक सर्कस की तरह का था।

मलिक—बिल्कुल ! गधा बन्दर को पीठ पर लिये हुए भागा जा रहा था। लोग उसको कङ्कड़ मार रहे थे और वह खौंखिया रहा था।

ललिता—और एक तरफ़ खड़े हुए कोई और बन्दर (ललित इत्यादि की ओर इशारा करती है) दाँत दिखा रहे थे।

दयाल—कोई दाँत दिखा रहे होंगे। हम तो देख रहे थे। क्यों भई मलिक ?

(क़हक़हा लगाते हैं)

ललिता—(बाहर की ओर देखकर) लो भई! तुम ठीक वक्त पर ही आ गये। वह देखो निर्मल बहिनें वसन्त के सब साज-बाज के साथ हमारी टोली में शामिल होने आई हैं।

माधुरी—आओ आओ बहिनो, तुमने तो आँखें ही थका दीं।

सागर—और ललित बेचारे तो कितनी देर से तुम्हारे स्वागत में दुम हिलाये जा रहे थे।

ललित—बदतमीज़ कहीं के। दुम होगी तुम्हारी।

(सब क़हक़हा लगाते हैं)

ललिता—लो तुम्हारे आने से यह महफ़िल फिर से गर्म हो उठी। आज तो वह वादा पूरा करना होगा।

निर्मल बहिनें—क्या वादा ?

ललिता—तुमने कहा था कि हम एक खास नृत्य तुम्हें दिखाएँगी।

निर्मल बहिनें—पर अभी तो हमने पूरा तय्यार नहीं किया।

माधुरी—तय्यारी क्या ? साजों की झङ्कार हुई, तबले पर थाप पड़ी, और लहरें ख़ुद थिरक उठीं।

निर्मल बहिनें—एक बात और है। हमको पापा के साथ कहीं और जाना है। पापा अभी बुलाने आयेंगे।

ललिता—जब आयेंगे देखा, जावेंगा। आज तो हम नृत्य देखकर छोड़ेंगे।

(धुन बजने लगती है)

वागेश्वरी—वाह-वाह क्या धुन है ?

दयाल—बस सङ्गीत का समन्दर ठाठें मार रहा है।

ललिता—अब तो यह फर्मायश पूरी करनी ही होगी।

निर्मल बहिनें—अच्छा तो सही। (बाहर देखकर) लो वह पापा तो आये बैठे हैं। तो हम नाच कर चली ही जावेंगी।

ललिता—अच्छा।

(सब आस-पास पास बैठ जाते हैं। नृत्य प्रारम्भ होता है। बीच में सब मनोरञ्जन-सूचक 'वाह'-'वाह' करते रहते हैं। नृत्य समाप्त

होते ही नेपथ्य से करुण-मय गान की ध्वनि सुनाई देती है। सब उत्सुकता से उसे सुनते हैं)

नेपथ्य से ध्वनि—मूरख बन्दे जाग—

अन्धा झूठे मद में होकर
ना गा भैरव राग। मूरख०
सपनों की माया में तूने
दुनिया नई बसाई।
सर्वनाश का झोंका आया,
सहसा हुई सफ़ाई।
अपने दुष्कर्मों के कारण
फूटा तेरा भाग। मूरख०

ललिता—कैसी दर्द-भरी धुन है।

वागेश्वरी—यह भिखारिणी की आवाज़ है। वह अकाल-पीड़ितों के लिए भीख माँगती फिरा करती है।

माधुरी—कैसे अकाल-पीड़ित ?

सुनन्दा—वाह ! तुम्हें यह पता ही नहीं। अकाल के गढ़ में बैठे हुए तुम्हें अकाल-पीड़ितों का ही पता नहीं ?

माधुरी—मुझे तो सचमुच पता नहीं।

सागर—कमाल है। अमीर ग़रीबों से किस क़दर दूर हैं !

ललित—ग़रीबों की चीखें भी उनके कानों तक नहीं पहुँचतीं।

ललिता—देखो माधुरी ! अकाल का भूखा भेड़िया हमारे मुल्क में जीभ लपलपाये घूम रहा है। माताओं ने बच्चों को, जो उनके जिगर के टुकड़े थे, नोचकर फेंक दिया है। भाई बहिनों से बिछुड़ गये हैं, पत्नियाँ पतियों से। मौत का बाज़ार गर्म है। पृथ्वी माता की गोद में न जाने कितने बच्चे अपनी कोमल मुस्कराती सूरतों पर एक दर्दनाक पुकार लिये हुए हमेशा के लिए सोये जा रहे हैं।

दयाल—और हम यहाँ वसन्त के उत्सव मना रहे हैं ?

माधुरी—इस भिखारिणी की करुणा-मय ध्वनि ने हमारे अन्धकार-मय दिलों में दीपक जला दिया है।

सुनन्दा—इस घोर सङ्कट में हमें भी अपने निर्धन भाइयों के कुछ काम आना चाहिए।

वागेश्वरी—ज़रूर। यह हमारा कर्तव्य है।

ललिता—मुझे एक विचार आया है। हम अपनी एक टोली बनायें और कई विधियों से बेचारे अकाल-पीड़ितों के लिए कुछ जमा किया करें।

वागेश्वरी—इसमें हमें बड़े लोगों की भी तो सहायता लेनी होगी।

दयाल—ज़रूर।

ललिता—हमारे दिलों में अगर ग़रीबों के लिए करुणा का भाव जाग उठे तो हम बहुत कुछ कर सकते हैं—हमारे देश का दुर्भाग्य-मय शिशिर वसन्त में परिवर्तित हो सकता है।

दयाल—अवश्य।

(सब विचार-विनिमय करते बाहर चले जाते हैं)

दृश्य ६

(डाक्टर कौल की घरेलू लेबोरेटरी। रविवार का दिन वे एक विशेष प्रयोग में मसरूफ़ हैं सहसा उनकी पुत्री वनिता का प्रवेश (समय सायङ्काल चार बजे)

वनिता—पापा! क्या कर रहे हैं आप? दिन भर यों ही मसरूफ़ रहते हैं। बस उठिए, चलिए बाहर।

कौल—(धीरे से चपत जमाकर) और क्या करूँ बिटिया?

वनिता—चलिए आप और हम खेलें। आप तो कभी मेरे सङ्ग खेले ही नहीं। माँ तो मेरे साथ खेला करती थीं।

कौल—माँ माँ है बेटी, बाप बाप है। बाप माँ कैसे बन सकता है?

वनिता—क्यों, साड़ी बाँध कर ! मेरा मन चाहता है आपको साड़ी पहना दूँ।

कौल—साड़ी पहनाकर भी तू बाप को माँ-जैसा न बना सकेगी, बिटिया ! रमा, आह ! वह तो सोने की देवी थी। उस-जैसी माँ तुझे कैसे नसीब होगी, रानी ?

वनिता—(आँसू भरकर) तो पापा ! मेरी माँ चली क्यों गई ?

कौल—तुझसे नाराज़ होकर। तू पगली जो है।

वनिता—ऐसी बात कहेंगे तो मैं आपसे लड़ बैठूँगी।

कौल—लड़ने को क्या बुआ काफ़ी नहीं ?

(सहसा राधा प्रवेश करके)

राधा—क्यों मेरी बिटिया को बहका रहे हो ? आ तो मेरी रानी ! (गले लगा लेती है)

वनिता—(नक़ली क्रोध से) देख बुआ ! पापा मुझे पगली कहते हैं।

राधा—अपनी अक़ल का बड़ा सबूत जो अभी दिया है। हज़ारों रुपये का शमादान गुल करवा लिया है।

(सहसा भागते हुए पहले नन्दो का और पीछे बैजू का प्रवेश)

नन्दो—बाबू ! बाबू ! बाहर पुलिस चोर को साथ लिये आई है। उनके पास चुराया हुआ वह—

बैजू—हाँ, हाँ बाबू—वह जो आप सोने का लाये थे, वह भी है।

वनिता—(विस्मय से) क्या शमादान ? (मिस्टर कौल से लिपट-कर) पापा ! माई गुड पापा !

(कौल चिन्तित-से नज़र आते हैं। नौकर बाहर जाता है)

राधा—अब पता लगेगा चोट्टे को ! क्या सोच रहे हो मुकुल ?

कौल—मैं कुछ सोच रहा हूँ, चुप रहो !

(नौकर का पुनः प्रवेश)

बैजू—बाबू ! पुलिसवाले अन्दर आना चाहते हैं। आने दूँ ?

कौल—आने दो ! राधे, वन्नो, तुम अन्दर चलो।

(एक ओर से राधा और वनिता बाहर जाती हैं, दूसरी ओर से फ़िरोज़ व दो पुलिसवालों का प्रवेश। एक सिपाही के हाथ में शमादान है। फ़िरोज़ खोया-खोया-सा खड़ा रहता है)

एक सिपाही—डाक्टर साहब ! यह बदमाश आपके यहाँ से यह शमादान चुराकर ले गया है। यह इसको बेचने की कोशिश में था।

कौल—आपको कैसे पता लगा कि वह शमादान मेरा है ?

एक सिपाही—ख़ुद चोर ने इक़बाल किया है।

कौल—यह चोर नहीं।

एक सिपाही—तो यह इसको चुराकर नहीं ले गया ?

कौल—नहीं।

दूसरा सिपाही—तो यह शमादान इसके हाथ में कैसे गया ?

कौल—ख़ुद मैंने इसको दिया है।

(सिपाही हैरान होकर एक-दूसरे की तरफ़ देखते हैं। फ़िरोज़ मतवाला-सा होकर सामने देखने लगता है। उसकी आँखों में आँसू छलकने लगते हैं)

सिपाही—पर यह तो कहता है कि मैंने इसको चुराया है।

कौल—तो यह दीवाना है ! इसका दिमाग़ ठिकाने नहीं !

(सिपाही शमादान फ़िरोज़ को पकड़ा देते हैं और सलाम करके चले जाते हैं। उनके जाते ही फ़िरोज़ मिस्टर कौल की ओर मुड़ता है। नेपथ्य से घोर वाद्य की ध्वनि सुनाई देती है। मिस्टर कौल अपने स्थान पर स्थिर रूप से खड़े रहते हैं। फ़िरोज़ उनके चरणों के पास शमादान रखकर उनके पाँव पर गिर पड़ता है। कौल उसको आहिस्ता-आहिस्ता उठा लेते हैं। फ़िरोज़ की आँखों से आँसुओं की धार बह निकली है। कौल की आँखों में भी आँसू हैं)

फ़िरोज़—(गिड़गिड़ाकर, भर्राई आवाज़ में) माफ़ करो देवता ! मैं बेहद क़सूरवार हूँ।

कौल—तुम्हारा क्या क़सूर है, मेरे भाई ! यह सब उस डायन का मायाजाल है, जिसको ग़रीबी कहते हैं।

फ़िरोज़—मैं तुम्हारा ख़तावार हूँ, मुजरिम हूँ। मुझे सज़ा दो।

कौल—सज़ा ? (आहिस्ता-आहिस्ता शमादान को उठाकर) तुम्हारी सज़ा यह है कि तुम अपनी अमानत लेकर फ़ौरन यहाँ से चले जाओ। यह लो अपनी अमानत ! (शमादान उसके हाथ में देना चाहता है)

फ़िरोज़—शर्मिन्दा न करो; ऐ रहम के फ़रिश्ते ! मैं ज़लालत की आग में जला जा रहा हूँ !

कौल—कौन कह सकता है तुम्हें ज़लील ? मैं उसकी ज़बान नोच लूँ। तुम मेरे भाई हो। सगे भाई से भी बढ़कर। मेरी यह नाचीज़ नज़र तुम्हें मंज़ूर करनी ही होगी।

फ़िरोज़—नज़र ? चोर को पाजी को नज़र ? क्या यह चीज़ देकर, मेरे देवता, तुम हमेशा के लिए मेरी ज़मीर पर एक बोझ का पहाड़ रख देना चाहते हो ?

कौल—देखो, फ़िरोज़ ! तुम क़सूरवार हो। तुमने ख़ुद तसलीम किया है। मुझे हक़ है कि मैं तुम्हें सज़ा दूँ; और मेरी सज़ा यही है कि तुम्हें यह शमादान लेना होगा।

फ़िरोज़—और अगर मैं इसे मंज़ूर न करूँ तो ?

कौल—मेरी सौगन्ध है जो तुम इसे न लो। मैं जानता हूँ अब तुम इन्कार न कर सकोगे।

(नेपथ्य में ऊँचा वाद्य होने लगता है। काँपते हाथों से फ़िरोज़ शमादान पकड़ता है तथा उसके सहित वह कौल के पाँव पर गिर पड़ता है)

फ़िरोज़—तुम इस दुनिया के इन्सान नहीं, बहिश्त के फ़रिश्ते हो।

कौल—(उसको उठाते हुए) मेरे भाई, मैं एक मामूली इन्सान हूँ नाचीज़ और हक़ीर ! मैं ख़ुश-क़िस्मत हूँ जो मेरे ज़रिए से तुम्हारी थोड़ी-सी ख़िदमत हो पाई है। जाओ, इस थोड़ी-सी पूँजी से ज़िन्दगी का एक नया दौर शुरू करो—साफ़-सुथरा, और ख़ूबसूरत ! ख़ुदा तुम्हारे काम में बरकत दे। जाओ ख़ुदाहाफ़िज़ !

(फ़िरोज़ आहिस्ता-आहिस्ता चलता है। नेपथ्य से करुण ध्वनि सुन पड़ती है)

नेपथ्य से ध्वनि—दुनिया के मुसाफ़िर चलता जा,
दुखियों के तू दामन भरता जा।
तू काँटों पर फूलों को सजा,
अंगारों पर मृदु-लेप लगा,
तू बन जा प्रेम का दीवाना,
उपकार का भरकर पैमाना,
इक-इक दिल को तू हरता जा—दुनिया

(फ़िरोज़ का निष्कासन)

(सहसा राधा एवं वनिता का प्रवेश)

वनिता—पापा! शमादान?

कौल—वह दुनिया के अँधेरे में उजाला करने गया है, बिटिया!

वनिता—पर पापा—

कौल—बस, इस बहिश्त को क़ायम रहने दे मेरी रानी! कुछ मत बोल।

(वनिता एवं राधा विस्मित खड़ी हैं। कौल दूर कल्पना-मय दृष्टि से देख रहे हैं। पर्दा गिरता है)

——

अङ्क २

दृश्य १

(कलकत्ता में ग़रीबिनी उमा का घर। चारपाई पर उसका बेटा विनोद बीमार पड़ा है। पास एक तरफ़ उसकी बेटी मीना उदास बैठी है। माँ-बेटी दोनों व्यथा-मय धुन में गा रही हैं। समय प्रातःकाल)

ज़िन्दगी का आसरा सपना हुआ,
हाल बत्तर हाय अब अपना हुआ।
हम दिखायें किसको दिल के आबले,
रंजो-ग़म से पस्त दिल अपना हुआ।
हाय क़िस्मत! कोई हद है ज़ुल्म की,
चैन दिन भर का भी अब सपना हुआ।

(गाते-गाते मीना सिसक-सिसककर रोने लगती है)

उमा—क्यों रो-रोके दिल खोती है बेटी! ये आँसू तो रेगिस्तान में गिरनेवाली पानी की बूँदें हैं। इनका किसी पर कोई असर नहीं। ग़रीब की दुनिया में सिवाय भगवान् के और कोई आसरा नहीं। आज दो दिन से विनोद के और तेरे मुँह में एक भी दाना नहीं गया। न जाने क्या होने को है?

मीना—माँ! इस हालत में हमें छोड़कर बाबा भी चले गये।

उमा—पत्थर का कलेजा बनाकर न जाने वे कहाँ चले गये? भगवान् उनकी जान को हरा रक्खें।

मीना—माँ, तुम्हें भगवान् पर इतना भरोसा क्यों है?

उमा—वही तो हमारा एक सहारा है बिटिया!

मीना—ग़लत है माँ ! वह हमारा नहीं, वह ग़रीबों-बेबसों का नहीं, वह तो उनका है जिनके पास माया है; माया ही तो भगवान् है।

उमा—ऐसा न कह मेरी बेटी !

मीना—क्यों न कहूँ माँ ? मुझे तो इस बुड्ढे परमात्मा से नफ़रत है। इसका दिमाग़ सठिया गया है। इसका इन्साफ़ एक-तर्फ़ा है। इसके दर्बार में ग़रीबों की कोई पहुँच नहीं। ग़रीब कुत्तों की ज़िन्दगी बसर करें, दाने-दाने को मोहताज हों; और अमीर मख़मली गद्दों पर लेटा करें; और खा-खाकर बदहज़मी से तङ्ग हों। यह भी क्या कोई तरीक़ा है ?

(सहसा विनोद हिलता है और बेचैनी से बोलता है)

विनोद—माँ ! मेरा जिस्म जला जाता है। न जाने अन्दर क्या हो रहा है ? ऐसा मालूम होता है कि कोई मुझे अन्दर ही अन्दर खा रहा है। क्या खाने को कुछ भी नहीं ?

उमा—तुम्हारा चचा रामधन लेने गया है बेटे। मेरे बहादुर बेटे ! अभी आ ही रहा होगा।

विनोद—यह तो तुम तीन दिन से कह रही हो माँ ! हाय ! अब सहा नहीं जाता।

उमा—लो मैं अभी बाहर देखकर आई। (जाती है)

मीना—(विनोद का हाथ पकड़कर) भैया !

विनोद—हाँ !

मीना—मेरा राजा भैया ! अभी चचा रामधन चावल लायेंगे। माँ चावल बनायेगी। मेरा भैया खायेगा।

विनोद—तू भी तो खायगी।

मीना—हाँ ! मैं भी खाऊँगी। माँ भी खायेगी।

विनोद—और बाबा ?

मीना—न जाने हमारे बाबा कहाँ गये हैं ?

विनोद—मुझे बाबा बहुत याद आते हैं, दीदी ! मैं उनसे मिलूँगा।

मीना—बाबा आ जायँगे भैया !

विनोद—हाय ! कब ?

मीना—आते ही होंगे

विनोद—अब तो बोला भी नहीं जाता। गला सूखा जा रहा है।

मीना—(उसे थपथपाते हुए) तू चुप से सो जा मेरे राजा !

विनोद—हाय ! नींद भी तो नहीं आती।

(मीना थपथपा कर सुलाने का प्रयत्न कर रही है)

(विंग से माइक्रो पर उमा की आवाज़। वह बराबर वाले कमरे से बोलती है)

उमा—भूखे पेट नींद कैसे आये ! भैया रामधन अब तक आये क्यों नहीं ? क्या हो गया ? तीन दिन से लगातार लेने जा रहे हैं, पर कुछ मिलता ही नहीं। चावल का एक दाना नसीब नहीं होता। कुछ तो दया करो ऐ भगवन् !

(वह मन्द स्वर में गुनगुनाती है)

तुम पर आशा, टेक तुम्हीं पर, ऐ मेरे भगवान् !
कुछ तो करुणा-दृष्टि करो, मरती भारत सन्तान !
कहते थे यह स्वर्ग-भूमि थी, अन्न दूध की खान,
अब तो जीते पत्ते खाकर, जैसे हों हैवान !

(सिसकियाँ भरती है। विनोद सो गया है)

मीना—माँ सिसकियाँ भर रही है। कोई आसरा नहीं। बाबा हमें छोड़ भागे हैं। बुज़दिल बाबा, बहादुर हमारी माँ ! अगर वह भी हमें छोड़ जाती !

(साइड-विंग से माइक्रो पर, मानों साथ के कमरे से)

उमा—आ गये भैया ?

रामधन—हाँ आ गया बहिन !

उमा—क्या कुछ चावल लाये ?

रामधन—कुछ नहीं मिला। बहुत घूमा, मिन्नतें की, लातें खाईं,

पर सिवा मायूसी के कुछ मुयस्सर नहीं हुआ। हाँ, ये कुछ पत्ते लाया हूँ। इन्हीं को खाकर कई जी रहे हैं। ये खाये जा सकते हैं, बहिन!

उमा—पत्ते?—हाय! मेरा बीमार बच्चा यह कैसे खायगा?

रामधन—बच्चे का क्या हाल है?

उमा—चलो चलकर देख लो। न दवा दारू न खाना। नन्हा-सा दिया बुझने को है।

(रामधन का स्टेज पर प्रवेश)

रामधन—(आहिस्ता से) सो रहा है विनोद?

मीना—हाँ, सो रहा है चचा! बड़ा दुखी है।

रामधन—ग़रीबी दुनिया में एक बड़ा दुख है बेटी! क्या करें, कोई चारा नहीं।

मीना—कुछ खाने को लाये?

रामधन—हाँ, लाया हूँ।

मीना—क्या?

रामधन—अभी तुम्हारे सामने आ जायगा। भूख मिटाने के लिए कुछ भी मिल जावे वही ग़नीमत है।

मीना—भैया के लिये कुछ दारू भी चाहिए। किसी को दिखा देते। जिस्म तपा जा रहा है।

रामधन—अच्छा दिखा दूँगा। देख मीना! तेरे लिए मैंने एक काम देखा है। करेगी?

मीना—ज़रूर करूँगी चचा! आजकल काम मिलना आसान है? पैसे-पैसे की दरकार है। तुम रात-दिन हमारे लिए मर रहे हो। काम करके मैं कुछ घिस थोड़े ही जाऊँगी। जब किस्मत ही ऐसी है तो क्यों न करूँगी?

रामधन—तू तो मेरी सोने की बेटी है। किस्मत होती तो रानी बनती।

मीना—कहाँ है काम?

रामधन—यहीं हमारे पड़ोस में सेठ तनसुख रहते हैं न? उनके यहाँ।

मीना—सेठ तनसुख, सोमा के बापू?

रामधन—हाँ! उन्होंने कहा है, सारे घर का खाने-पीने का निबाह वे कर देंगे। सोमा के नन्हे भैया को खिलाने का काम है।

मीना—तो मुझे वह दिला दो चचा! खाने का ही तो बड़ा सवाल है। खाना ठीक मिलेगा तो भैय्या भी अच्छा हो जावेगा।

रामधन—हाँ, जरूर।

(विनोद जाग उठता है)

विनोद—दीदी! दीदी! मुझे पकड़ो। मैं कहाँ हूँ?

मीना—यहीं मेरे भैया! देखो तो चचा रामधन आये हैं।

विनोद—(भय-भीत होकर स्थिर दृष्टि से दूर देखते हुए) मैं चला जा रहा हूँ दीदी! मुझे जाने मत दो।

मीना—कहाँ जा रहे हो भैया? क्या तूने सपना देखा है?

विनोद—(भयभीत होकर) वह देखो—वह देखो, वह कोई मुझे पकड़ने आ रहा है। बड़ा डरावना है दीदी। (रोने लगता है) वह मुझ जरूर ले जावेगा! पकड़ो-पकड़ो!

(भय से उधर देखते हुए रोता और काँपता है)

रामधन—विनोद! बेटे विनोद। क्या हो गया तुझे?

मीना—माँ-माँ! इधर आओ। भैया को कुछ हो गया।

(झपटकर उमा अन्दर आती है। आकर विनोद को गोद में लेना चाहती है। विनोद त्रस्त होकर बड़बड़ाता है)

विनोद—छोड़ दो मुझे—छोड़ दो—माँ-माँ!

(चीख मारकर विनोद बेहोश होकर गिर पड़ता है तथा कुछ ही समय में जीवन-रहित हो जाता है)

उमा—मैं ही तो हूँ बेटा! क्या हो गया तुझे? (रोने लगती है)

रामधन—(नब्ज़ देखकर) नन्हा दिया बुझ ही गया। (रोता है)

मीना—(लिपटकर) भैये ! भैये ! कहाँ चले गये तुम ? देखो तो दीदी को ! (रोती है)

उमा—चला गया बेचारा सिसकता (उफककर रोती है)

(सब शोकातुर हैं। पर्दा गिरता है)

दृश्य २

(कलकत्ता का एक बाज़ार। गाते हुए लड़के-लड़कियों की टोली का प्रवेश। उनके हाथों में कई पोस्टर हैं जिन पर बड़े बड़े अक्षरों में लिखा है—"मृत्यु का नङ्गा नाच"—"गरीबों की मदद करो" इत्यादि। समय मध्याह्न)

गाना—कुछ सेवा कर लो, कुछ नाम कमा लो, करके उपकार ग़रीबों का,
कुछ दाना दे दो, कुछ लत्ते दे दो, रख लो संसार ग़रीबों का।
वे घूम रहे मोहताज हुए, उनकी क़िस्मत में रोना है,
कुछ दया करो, धनवालो तुम, कर लो उद्धार ग़रीबों का।
घर-घर में रोना जारी है, हर तरफ़ ही आहो-ज़ारी है,
आँसू उनके पोंछो बढ़कर, दिखला दो प्यार ग़रीबों का।

(उनके गाते-गाते कई लोग इधर से उधर जा रहे हैं। उनको बच्चे टिकटें देते हैं। कई ले लेते हैं। कई देखकर चले जाते हैं। गाने के बाद—)

ललिता—देश-वासियो ! तुम्हारे ग़रीब भाइयों पर दुःख की घटाएँ छाई हुई हैं। इसी शहर में रोज़ सैकड़ों भूख के रोग से तड़पते हुए मौत का शिकार हो रहे हैं। अपने फ़र्ज़ को देखो।

माधुरी—कुछ भर-पेट खाते हैं, कुछ दाने-दाने को मोहताज हैं। बाँटकर खाओ, बाँटकर खाओ।

दयाल—आज शाम को सात बजे माइनर्वा थियेटर में आपके छोटे-छोटे बच्चे अकाल-पीड़ितों की सहायता के लिए एक खेल कर रहे हैं। आइए—ज़रूर आइए और नाम कमाइए।

(इसी समय सेठ तनसुख और उनके पी० ए० दलपत प्रवेश करते हैं। बच्चे उनकी ओर टिकटें बढ़ाते हैं)

तनसुख—यह क्या है ?

सुनन्दा—यह अकाल-पीड़ितों की मदद के लिए एक खेल हो रहा है, उसके टिकट।

मलिक—यह ज़रूर लेना होगा सेठजी !

तनसुख—यह देखो भाई दलपत, क्या बात है ?

(दलपत देखने लगता है और ऊँचा पढ़ता है)

दलपत—बच्चों की तरफ़ से फ़ैमिन रिलीफ़ के लिए चैरिटी शो !

तनसुख—तुम्हारी लत जाती नहीं। एक-एक सतर में बीस-बीस अँगरेज़ी के लफ़्ज़ ज़रूर बोलोगे। मुझे पता है कि तुम बी० ए० हो !

दलपत - आई ऐम सारी।

(सब बच्चे हँसते है)

तनसुख—यह अब क्या बोला है ? यह क्या पश्तो है ?

दलपत—ओ हो हा !

तनसुख—मैं तो तुमसे बेज़ार हो गया हूँ। (चलने लगता है। बच्चे फिर घेर लेते हैं)

ललिता—सेठ साहब ! टिकट लीजिए न ?

माधुरी—ग़रीबों की मदद कीजिए—भूखों को अन्न दीजिए।

दलपत—सेठ साहब अन्न का तो काम करते हैं। (सेठ तनसुख उसकी तरफ़ देखकर दाँत पीसता है) बहुत दे सकते हैं—बहुत।

तनसुख—अन्न का तो काम करते हैं—अन्न का तो काम करते हैं—तू तो मेरी ईंट से ईंट बजावेगा।

दयाल—नहीं सेठ साहब ! आपका बड़ा नाम होगा। आपको तो हमारे जलसे का प्रेसिडेंट बनना चाहिए।

दलपत—फ़ाइन ! फ़ाइन ! इनसे बेहतर आदमी इस काम के लिए न मिलेगा।

तनसुख—(दाँत पीसकर) इस हिन्दुस्तानी साहब को ही ले जाओ तुम—इसी के साथ वह दुम लगाओ।

दलपत—थैंक यू—थैंक यू। (हँसता है)

तनसुख—(नाक पर रूमाल रखकर खाँसते हुए) यह धुआँधार अँगरेज़ी तो मुझे मिरचों की धूनी मालूम देती है। अच्छा, मैं चला।

(बच्चे फिर घेर लेते है)

मालिक—सेठ साहब! हम हरगिज़ बिना ख़रीदे आपको जाने न देंगे।

वागेश्वरी—ज़रूर!

तनसुख—ज़रूर—ज़रूर—यह सड़क क्या तुम्हारे बाप की है?—हम नहीं रुकेंगे।

ललिता—सेठजी! आपकी बेटियाँ आपसे भीख माँग रही हैं आपको भगवान् ने इतना कुछ दिया है। उसमें से एक चींटी की चोग निकाल देने से कुछ कभी न होगी।

दलपत—सेठ साहब को भगवान् ने बहुत कुछ ऐनौमेस...ओहो—हो आई ऐम सारी...ओहो—हो...बहुत कुछ दिया है।

(बच्चे हँसते हैं। सेठजी आँखें फाड़कर उसकी तरफ़ देखते हैं)

तनसुख—अजब आदमी है। (जेब में से पैसे निकलवाए बग़ैर इसको चैन नहीं। जेब में टटोलने लगता है। ललिता कापी में से टिकट काट देती है। सेठ साहब जेब में से टटोलकर चार आने निकालते हैं। सब बच्चे हँसने लगते हैं)

ललिता—दस रुपये निकालिए सेठ साहब, दस रुपये। यह टिकट दस रुपये का है।

तनसुख—हैं! दस रुपये? यहाँ तो इससे एक धेला ज़्यादा नहीं।

दलपत—तो मैं आपके हिसाब में दे दूँ? अभी तो बैंक से निकलवा कर लाया हूँ।

(बच्चे सेठ साहब को घेर लेते हैं। वे घबराते और दाँत पीसते हैं)

माधुरी—हुक्म कीजिए सेठ साहब, हुक्म।

मालिक—बच्चों की दरख्वास्त कभी रायगाँ न जायगी।

दयाल—जी हाँ।

तनसुख – (तङ्ग-से होकर) तुम तो डाकुओं की टोली हो, डाकुओं की टोली। लसूढ़े की गिटक की तरह चिपट गये हो। अच्छा लो।

(जेब में से रुपये निकालता है। एक-एक गिनकर दयाल को देता है। दयाल एक-एक को जाँचता है। कई रुपये खोटे निकलते हैं। दयाल वापिस करता है। सेठ नाक-भौंह सिकोड़कर दूसरे रुपये देता है और देकर चलता है। बच्चे नमस्ते करते हैं)

दलपत—सस्ता ही छोड़ दिया तुमने सेठ साहब को।

(सेठ दाँत पीसकर पीछे देखता है और बोलता है)

तनसुख—आज ही बताऊँगा तुम्हें।

दलपत—ओह नैवर-माइंड।

ललिता-दयाल—और आपका टिकट पी० ए० साहब ?

दलपत—(जल्दी से चलकर मुस्कराते हुए) ओह ! नैवर-माइंड। (हँसता है और तेज़ी से जाता है। दूसरी ओर से प्रारंभिक गाना गाते हुए बच्चे निकल जाते हैं)

दृश्य ३

(कलकत्ता में माइनर्वा थियेटर की स्टेज पर दुर्भिक्ष-पीड़ितों की सहायता में बच्चों का खेल। समय सायङ्काल)

ललिता—(स्टेज पर आकर) अब बच्चों की चैरिटी परफॉर्मेंस का यह प्रोग्राम एक कोरस गाने से शुरू होगा।

(बच्चों के एक ग्रूप का आना तथा गाना)

हम खिले फूल हैं दुनिया के, दुनिया को खिला देंगे,
हम मुर्झाये गुंचों पर नई रौनक़ ला देंगे।
जब दुनिया की रुखाई से, मायूस हुआ होगा दिल,
हम दिल की वीणा से झङ्कार उठा देंगे।

हम हिन्द के सच्चे बच्चे हैं सुन लो ऐ जहाँवालो,
हम 'हक़' की खातिर अब तहलका मचा देंगे।
हम हिन्दु ओ मुस्लिम का, सिख पारसी क्रिश्चिन का,
सच्चे हिन्दी बनकर ही सब फ़र्क़ मिटा देंगे।
(गाते-गाते जाते हैं। जनता तालियाँ पीटती है)

ललिता—(स्टेज पर आकर) अब छोटे-छोटे बच्चे "मासी के लड्डू" नाम का एक फार्स पेश करेंगे। देखिएगा, कहीं आपके मुँह में पानी न आ जाए।

(फार्स शुरू होता है)

मुन्नी—(एक पार्सल लिये हुए दाखिल होती है तथा जोर-जोर से पुकारती है) नेशी—नेशी—देख डाकिया एक पार्सल लाया।

(भागते हुए नेशी का प्रवेश)

नेशी—कैसा पार्सल मुन्नी ?

मुन्नी—यह देख।

नेशी—तो दिखा तो सही।

मुन्नी—दिखाऊँगी तुझे ज़रूर। तू तो हड़प कर जावेगा।

नेशी—क्या है इसमें ?

मुन्नी—मासी ने लड्डू भेजे हैं।

नेशी—तो दिखा तो सही।

मुन्नी—नहीं दिखाती—नहीं दिखाती।

नेशी—दिखा, नहीं तो मैं अभी तेरी मरम्मत करता हूँ।

मुन्नी—नहीं दिखाऊँगी—नहीं दिखाऊँगी।

(नेशी झपटता है। मुन्नी चिल्लाती है। अन्दर से उनकी बड़ी बहन माधुरी का प्रवेश)

माधुरी—क्या बात है ? क्यों लड़े जा रहे हो नरेश ?

नेशी—यह मुझे दिखाती नहीं।

माधुरी—क्या ?

नेशी—"मासी के लड्डू"।

मुन्नी—दिखाती, तो यह हड़प न कर जाता।

माधुरी—अच्छा ला, देखूँ तो सही।

मुन्नी—लो! (देती है। माधुरी खोलती है। नेशी-मुन्नी उत्सुकता से देखते हैं। बीच में से मट्टी और कङ्कड़ निकलते हैं। सब बड़े हैरान हैं। सहसा उनके बड़े भाई रमेश का प्रवेश)

रमेश—(क़हक़हा लगाते हुए) वाह-वाह! प्लेट लाऊँ लड्डू रखने के लिए? (फिर क़हक़हा लगाता है)

(मुन्नी-नेशी दोनों रमेश पर टूट पड़ते हैं और उसको मुक्के रसीद करने लगते हैं। माधुरी मुस्कराती रहती है)

रमेश—अरे छोड़ो बाबा, छोड़ो। माफ़ करो।

माधुरी—तो यह सब शरारत तुम्हारी थी! क्या ख़ूब रहे!

मुन्नी—अब मासी से कहकर तुझे पिटवाऊँगी।

रमेश—कैसा उल्लू बनाया तुम्हें। डाकिये को कह दिया था कि जाकर कहना मासी के लड्डू हैं। डाकिया क्या मासी के घर से आया था?

मुन्नी—नेशी—अच्छा, हम भी देख लेंगे। (बिगड़कर जाते हैं। दूसरी ओर से माधुरी और रमेश जाते हैं)

ललिता—(स्टेज पर आकर) लीजिए, अब आख़िरी आइटम निर्मल बहनों का एक नृत्य है। आपने जो हम बच्चों का हौसला बढ़ाया है, उसके लिए शुक्रिया। आप लोगों की मेहरबानी से ये छोटे-छोटे बच्चे रिलीफ़ फ़ण्ड में ५०००) दे सके हैं। लीजिए, अब देखिए नृत्य। (लोग तालियाँ पीटते हैं। निर्मल बहनों का नृत्य होता है और जाने पर पटाक्षेप)

दृश्य ४

(कलकत्ता के समीप रहमान मिल्स के मालिक मिस्टर रहमान का दफ़्तर। वे सोचते-सोचते खड़े होते हैं और मेज़ पर सहारा लेकर बैठ जाते हैं)

रहमान—आज मैं कहाँ हूँ और तब कहाँ था? कल का ही वाक़या मालूम देता है। क़ैदखाने से छूटकर आया हुआ, दर-दर ठोकरें खाने-

वाला, लावारिस मुजरिम फ़िरोज़। आज मैं रहमान हूँ। रहमान। (सोचता है) रहमान मिल्स का मालिक। कुछ लाख का असामी। आज मेरे पास गाड़ी-घोड़े हैं, नौकर-चाकर हैं। सब कुछ है। पर मेरी ज़िन्दगी सूनी है। सब कुछ रखते हुए भी मैं कङ्गाल हूँ। रह-रहकर मेरे सामने फातिमा की तस्वीर नाच उठती है। उसके वे मीठे-मीठे मनसूबे। बेचारी सब कुछ दिल में ही लेकर चल बसी। मेरी नन्ही बेटी सुल्ताना। उसकी तोतली आवाज़ अब तक मेरे कानों में गूँजती मालूम देती है। जब रुपया नहीं था, तो क़नबा था; आज रुपया है, सब तरह की आसाइश है, तो उसका इस्तेमाल करनेवाला कोई नहीं। अल्लाह का इन्साफ़ भी अजीब है।

(कोई दरवाज़ा खटखटाता है)

रहमान—आइए!

(मिस्टर खन्ना का प्रवेश)

आइए मिस्टर खन्ना! (हाथ मिलाता है) आज़ तो ख़ूब आये। अभी चन्द लमहे पहले आपके बारे में ही सोच रहा था।

खन्ना—मेरी ख़ुशक़िस्मती! हाँ मिस्टर रहमान! आज के स्टेट्समैन में आपने अपनी मिल पर निकला आर्टिकल पढ़ा? राइटर ने ग़ज़ब की तारीफ़ की है। एक अजीब बात जो उसने लिखी है वह यह है कि मिस्टर रहमान अपनी ज़िन्दगी के असली हालात को पोशीदा ही रखना चाहते हैं। लाखों रुपये के मालिक होने पर भी उनका मज़दूरों से बिल्कुल बिरादराना सलूक होता है। नफ़े का एक बड़ा हिस्सा वे मज़दूरों ही में बाँट देते हैं। उनकी ज़िन्दगी के हालात के बारे में लोग कई तरह की कयासाराइयाँ करते हैं। वे एक पूँजीपति होते हुए भी एक फ़क़ीर हैं।

रहमान—ख़ामख़ाह इतनी तारीफ़ों के पुल बाँधे हैं। मैं तो इस क़ाबिल नहीं हूँ।

खन्ना—पर मिस्टर रहमान, आपकी ज़िन्दगी के हालात दुनिया से पोशीदा क्यों हैं?

रहमान—उन पर मैं एक पर्दा पड़ा रहने देना चाहता हूँ।

खन्ना—क्यों ?

रहमान—मैं एक नाचीज़ इन्सान हूँ। मेरी हस्ती तो धूल की तरह है। मेरी यह मिल मेरे मन्सूबों और दिली ख्वाहिशों का रूप है। मैं इस सब को अपना नहीं समझता। जिन ग़रीबों के कन्धों पर यह खड़ी है, उन्हीं में से एक मैं हूँ। मैं अपने लिए कोई ख़ास अहमीयत नहीं लेना चाहता। ग़रीबों के एक नाचीज़ ख़ादिम के तौर पर मैं पर्दे में ही रहना चाहता हूँ। जिस किसी दोस्त ने यह आर्टिकल लिखा है, उसने कुछ हद तक मुझ पर ज्यादती की है।

खन्ना—माफ़ फ़रमाइये। आपके ख़याल से मैं तो मुत्तफ़िक नहीं हूँ। अच्छी चीज़ की तारीफ़ ज़रूर होनी चाहिए, जिससे लोगों की नज़र में वह ऊँची हो सके। आपने अपनी मिल में जो शानदार तजबो किया है, वह दुनिया के सामने एक अजीब मिसाल है। हाँ, अब मैंने सुना है कि आप एक बहुत बड़े पैमाने पर ख़ैराती अस्पताल खोल रहे हैं ?

रहमान—जी हाँ, मैं कुछ ऐसी कोशिश कर रहा हूँ।

खन्ना—ग़रीब तबक़े के लोगों के लिए वह एक न्यामत होगी।

(मिस्टर रहमान का नौकर नईम एक कार्ड लेकर आता है। मिस्टर रहमान पढ़ते हैं। कुछ हैरान-से होकर उठ खड़े होते हैं। सोच-से रहे हैं।)

खन्ना—अच्छा, तो मुझे इजाज़त।

रहमान—बहुत अच्छा। कभी-कभी नियाज़ अता करते रहा कीजिए।

खन्ना—ज़रूर हाज़िर होता रहूँगा।

(खन्ना जाते हैं। रहमान नौकर से)

रहमान—उनको अन्दर लिवा लाओ।

नौकर—बहुत अच्छा हुज़ूर।

रहमान—मिस्टर कौल ! तो क्या मेरी ज़िन्दगी का राज़ उन पर ज़ाहिर हो गया है ?

(मिस्टर कौल का प्रवेश। मिस्टर रहमान उनसे हाथ मिलाकर उन्हें बिठाते हैं)

कौल—मिस्टर रहमान! मैं आपके इश्तहार के सिलसिले में आपसे मिलने आया हूँ। मुझे पहले कभी आपका नियाज़ हासिल नहीं हुआ; पर मैं आपके बारे में सुनता बहुत-कुछ रहा हूँ।

रहमान—आपकी ज़र्रा नवाज़ी के लिए शुक्रिया।

कौल—मैं एक डाक्टर हूँ। इंडियन मेडिकल सर्विस में हूँ; पर वहाँ से इस्तीफ़ा देकर किसी ख़ैराती अस्पताल में काम करना चाहता हूँ। ग़रीबों की ख़िदमत मेरी ज़िन्दगी का मक़सद रहा है। आपने अपने अस्पताल के लिए अगर इञ्चार्ज न रखा हो, तो मैं अपने आपको उस ओहदे के लिए पेश करता हूँ।

रहमान—मेरी ख़ुशक़िस्मती है कि आप-जैसे क़ाबिल डाक्टर की ख़िदमात मेरे अस्पताल को हासिल हो रही हैं।

कौल—देखिए मिस्टर रहमान! मुझे रुपये का कोई लालच नहीं। मैं सिर्फ़ उतना चाहता हूँ, जितने से मेरे पेट का गुज़ारा चल जावे।

रहमान—यह अस्पताल आपकी अपनी चीज़ है मिस्टर कौल! आपकी ही पूँजी की नींव पर इसकी दीवारें खड़ी हो रही हैं। आप आज मुझको एक अजनबी के तौर पर देख रहे हैं, पर मैं आपका एक पुराना एहसानमन्द हूँ।

कौल—मिस्टर रहमान! मैं कुछ समझ नहीं रहा हूँ। मैं अपनी याददाश्त में आपको आज पहली बार ही देख रहा हूँ।

रहमान—हाँ, इस शक्ल में। इस नाम में।

कौल—यह क्या गोरखधन्धा है? मुझे तो कुछ समझ में नहीं आ रहा।

रहमान—ज़रा ग़ौर से मुझे देखिए मिस्टर कौल! शायद आपकी आँखें गवाह बन सकें।

(मिस्टर कौल उनकी तरफ़ ग़ौर से देखते हैं)

पर नहीं, आज वह दाढ़ी नहीं—वह बिखरे बाल—वह क़ैदी की पोशाक—

(सहसा मिस्टर कौल अपनी जगह से उठकर मिस्टर रहमान को उनकी बाज़ू से पकड़ लेते हैं और हैरानी से कहते हैं)

कौल—फ़िरोज़—

रहमान—हाँ, वही फ़िरोज़ ! पर उसने अपनी पिछली ज़िन्दगी पर "रहमान" का नक़ाब पहन लिया है। उस मुजरिम की ज़िन्दगी पर एक फ़रिश्ते का मुलम्मा चढ़ गया है। आज यह मिल उसी शमादान की पूँजी पर खड़ा है, जो आपने उस लावारिस को अता किया था।

कौल—या मालिक, तेरी अजब शान है।

रहमान—आप शायद यक़ीन न करेंगे, पर इश्तहार देने के वक्त मेरी वाहिद दिली ख़्वाहिश यही थी कि आप ही इस अस्पताल की बागडोर सँभालें। आपको यह पता नहीं कि अस्पताल का नाम मैंने दि कौल चेरिटेबल हॉस्पिटल ही रखा है। जिस चिनगारी को आपने अपनी रहम की नज़र से सुलगाया था, आज एक शानदार लौ की शक्ल अख़्तियार करने जा रही है।

कौल—आज मुझे कितनी ख़ुशी है, यह ज़बान से बयान नहीं कर सकता।

रहमान—विन्नो का क्या हाल है ?

कौल—बिल्कुल ठीक।

रहमान—अब तो शायद मुझे देखकर न डरे। "फ़िरोज़" क़ैदी से तो वह बहुत डरती थी।

कौल—(हँसकर) आज का क़ैदी कल का शाहंशाह भी हो सकता है, यह किसी ने ग़लत नहीं कहा।

रहमान—यह सब आपके ही रहम का खेल है मिस्टर कौल ! हाँ, एक दरख़्वास्त है। मेरी ज़िन्दगी का यह राज़ अभी आप और मुझ तक ही महदूद रहे।

कौल—ऐसा ही होगा।

रहमान—तो कब आ रहे हैं आप चार्ज लेने ?

कौल—बस, जल्द से जल्द।

रहमान—विन्नो को साथ लेकर आइएगा।

कौल—बहुत अच्छा।

(हाथ मिलाकर मिस्टर कौल जाते हैं)

रहमान—आज मेरी सूखी ज़िन्दगी में नई कोंपलें फूटती मालूम देती हैं। मेरी दिली तमन्ना बर आई है। (कल्पना-मय दृष्टि से दूर देख रहा है)

(पर्दा गिरता है)

दृश्य ५

(कलकत्ते का बाज़ार। दीवाली का जमघट। समय रात्रिकाल। लोग आ-जा रहे हैं। बच्चे फुलझड़ियाँ चलाते खेलते बड़े बच्चों के साथ घूम रहे हैं। नेपथ्य से भिखारिणी के गाने की आवाज़ आती है)

आई आज दिवाली आई।
उजली या के काली आई।
दीपक सूने, घर हैं सूने, सूना सब संसार,
जीवन की जगमग झूठी है, झूठा सब यौहार।
तो भी लिये पुरानी यादें, आई अरी दिवाली आई,
आई आज दिवाली आई।

(खोंचेवाले प्रवेश करते हैं)

मिठाईवाला—मिठाई मज़ेदार—मिठाई मज़ेदार,
बस लेते जाना यार—और खाते जाना यार—
यह कलकत्ते का रसगुल्ला—यह है मोहनभोग,
ताज़ी है—ताज़ी है—ख़ालिस घी की—
ख़ास दिवाली की मिठाई।

(लोग और बच्चे सुनते हैं और लेते जा रहे हैं)

खिलौनेवाला—ख़ास खिलौनेवाला है यह, चीज़ें मज़ेदार,

बस लेते जाना यार—अब लेते जाना यार।
हाथी है और कहीं है घोड़ा, कहीं गुड़िया और बाबा,
बिना लिये जो घर जावेगा, होगा फिर पछतावा।
लिये जाओ—लिये जाओ—सस्ते दामों—
लगाये हैं, दिवाली के खिलौने।

(भीड़भाड़ में सेठ तनसुख और उनके बेटे मंगू और बेटी सोमा का प्रवेश। पीछे-पीछे दासी के रूप में मीना बहुत कुछ उठाये हुए है)

तनसुख—आज मैं तो तुमसे लाचार हो गया हूँ। क्या-क्या खरीदते जाओगे ?

मंगू—माँ ने कहा था कि—

तनसुख—तुम्हारी माँ ने तो सारा बाज़ार खरीदने को कह दिया होगा। तो क्या मैं खरीदता जाऊँगा ?

सोमा—हम मिठाई लिये बग़ैर न जायेंगे।

तनसुख—अच्छा-अच्छा—ऐ मिठाईवाले ! मिठाई क्या भाव ल गाई है ?

मिठाईवाला—३॥) रुपये सेर !

तनसुख—३॥) रुपये सेर ? यह क्या लूट मचा रखी है ?

मिठाईवाला—सेठ साहब ! जैसी चीज़ वैसा दाम ! ख़ालिस घी की बनी है। लाजवाब चीज़ है। खाकर याद कीजिएगा।

तनसुख—याद तो रहेगा ही। यह लूट क्या भूलनेवाली है ? अच्छा, दो आध सेर।

सोमा—आध सेर से क्या बनेगा बापू ?

मंगू—हाँ बापू।

तनसुख—तो क्या एक मन ले दूँ ? न जाने ये लड़के-लड़की हैं या सफ़ेद हाथी।

मिठाईवाला—ले दो सेठ साहब ! ले दो।

तनसुख—ले दो—ले दो—तुम्हें क्या है ?—तुम्हें तो ग्राहक चाहिए। अच्छा दो एक सेर।

मंगू—यह भी थोड़ी है बापू।

तनसुख—बस, इससे ज्यादा न ले के दूँगा। तौल दो भई, तौल दो।

(मंगू-सोमा रुठकर खड़े हो जाते हैं। मिठाईवाला मिठाई तौलता है)

तनसुख—(मंगू-सोमा को पुचकारने की कोशिश करता है। वे मचल कर परे हट जाते हैं) देखो तो, सूजकर मन-मन के हो गये हैं। आओ बाबा, आओ। आओ मुन्ने, मुन्नो—तुम्हें खिलौने ले दूँ।

मंगू—हम बड़ा-सा खिलौना लेंगे।

सोमा—मैं उससे भी बड़ा।

तनसुख—(पुचकारकर) ले लेना ले लेना—हाँ भई खिलौनेवाले! खिलौने कैसे दिये?

खिलौनेवाला—सेठ साहब! खिलौने खिलौने का दाम है।

तनसुख—देखो दो बड़े से (आहिस्ता से) सस्ते-से (फिर ऊँचा) खिलौने दिखा।

मंगू—ऊँ-ऊँ हम नहीं लेते—हम नहीं लेते!

सोमा—चल भैया, घर चल। हम माँ से कहकर मँगवा लेंगे।

(दोनों जाने लगते हैं। तनसुख रोककर)

तनसुख—माँ से मँगवा लेंगे! माँ तुम्हें पेरिस से मँगवा देगी? एह! अच्छा भई, दे दो जो माँगते हैं!

(खिलौनेवाला दो खिलौने देता है। बच्चे नाचते हैं) तो दाम?

खिलौनेवाला—दो रुपये सेठ साहब!

तनसुख—(झल्लाकर) हैं—दो रुपया! मिट्टी का दाम दो रुपया?

खिलौनेवाला—सेठ साहब! ज़रा बाज़ार-भाव आप भी थोड़ा ले लिया कीजिए तो हम ग़रीब भी थोड़ा ले लिया करें। महँगी की हालत तो देखिए खाने की चीज़ों के भाव इस क़दर बढ़ गये हैं कि ग़रीबों के पाँवों के नीचे से ज़मीन निकली जाती है।

तनसुख—तो सब ख़र्चा मुझसे ही वसूल कर लेना है?

खिलौनेवाला—ऐसा हो सकता है सेठ साहब?

(तनसुख चलना चाहता है। सहसा मीना बोलती है)

मीना—सेठजी ! एक गुड़िया मैं भी लूँगी।

(इसी वक्त रहमान, कौल और वनिता बाज़ार में आते हैं और मिठाईवाले से बात करने लगते हैं)

तनसुख—हैं ! तू भी लेगी ? क्यों ?—

मीना—मेरा भी दिल करता है।

तनसुख—क्यों ?

मीना—मैं भी तो बच्चा हूँ।

तनसुख—तू बच्चा कहाँ से है ? तू तो नौकर है।

(मीना रोने लगती है। रहमान की नज़र उधर पड़ जाती है। वह पास जाकर कहता है)

रहमान—सेठ साहब ! नौकर क्या बच्चा नहीं हो सकता ?

(मीना की पीठ थपथपाता है)

तनसुख—वाह, बाबू साहब ! आप क्या वकील हैं ?

रहमान—नहीं तो !

तनसुख—तो आप ख़ामख़ाह बीच में क्यों बोल उठे ?

रहमान—आपकी इस बेइन्साफ़ी को देखकर। आप इसके आक़ा हैं। आक़ा और बाप में क्या फ़र्क़ है ? आपने अपने बच्चों को खिलौने लेकर दिये हैं—एक खिलौना इसको भी ले देने से क्या आसमान गिर पड़ता ?

तनसुख—इतना रहम है, तो ख़ुद ले दो।

रहमान—हाँ, वह तो मैं ले ही दूँगा। आप आक़ा होने के क़ाबिल नहीं।

तनसुख—तो रख लो तुम इसे। (मीना की तरफ़ देखकर) चल निकल जा !

(गुज़रते हुए पल्लेवाले से) ओ पल्लेवाले !

पल्लेवाला—हाँ सेठ साहब !

तनसुख—उठा ले यह सामान।

(मीना रोते-रोते सामान पकड़ा देती है। सेठ सामान उठवाये—बच्चों को साथ लेकर चला जाता है। मीना हताश-सी खड़ी रहती है। रहमान गुड़िया ख़रीदता है।

रहमान—लो तो बिटिया, यह गुड़िया!

मीना—आपने नाहक़ तकलीफ़ की। मैंने ख़ामख़ाह माँगकर यह बखेड़ा खड़ा किया।

रहमान—क्यों, इसमें तुम्हारा क्या क़सूर था? बच्चों का दिल तो चाहता ही है न?

मीना—पर ग़रीब बच्चों का दिल दिल नहीं होता, पत्थर का टुकड़ा बन जाता है।

रहमान—तुम्हारा क्या नाम है बिटिया?

मीना—मीना!

रहमान—तुम्हारे माँ-बाप?

मीना—माँ हैं—बाप कहीं चले गये।

कौल—कहाँ?

मीना—कुछ पता नहीं।

वनिता—पापा! इसके पापा कहीं चले गये?

कौल—हाँ, विन्नो!

रहमान—क्यों चले गये तुम्हारे अब्बा?

वनिता—ग़रीबी से घबराकर। माँ पर सब बोझा आ पड़ा। बेचारे चचा ने बड़ी मदद की। मेरा भैया चल बसा। सदमे से माँ बीमार पड़ गई। घर में ग़रीबी—कङ्गाली—छा गई। चार पैसों के लिए मुझे नौकरी करनी पड़ी। हमारी हालत बड़ी दर्दनाक है। रोज़ का गुज़ारा रोज़ पर चल रहा है। क्या बनेगा अब?

रहमान—तुम कुछ फ़िकर न करो। वह अल्लाह सब को देनेवाला है। चलो, हम तुम्हारे घर चलकर देखते हैं। मदद करनेवाला तो वह भगवान् ही है। (मिस्टर कौल से) आइए मिस्टर कौल!

कौल—चलिए।

मीना—आप तकलीफ़ क्यों करते हैं ?
रहमान—कोई तकलीफ़ नहीं, यह हमारा फ़र्ज़ है।
(सब जाते हैं)

दृश्य ६

(कलकत्ता की ग़रीब बस्ती में दुःखिनी उमा का घर। सब कुछ अस्त-व्यस्त है। वह टूटी-सी चारपाई पर रोग-ग्रस्त पड़ी है। व्यथा-मय धुन में गुनगुना रही है। बीच बीच में खाँसी आती है। समय सायंकाल)

उमा—यह दुनिया—यह दुनिया, है दुखों का आगार,
माया-मय छलनी का है यह निर्मम पारावार—
आशाओं की मधु बगिया में तूने किया बसेरा,
भोले पंछी तू क्या जाने क्या भविष्य है तेरा,
आया एक झँकोरा, बिखरा नीड़ का इक-इक तार। यह०
सपनों की दुनिया में जीवित तेरे सुख का छोर,
नोचे परवाला मयूर मन रो-रो करता शोर,
हृदय-रक्त का अब तो पल-पल होता है आहार। यह०
(बड़े ज़ोर से खाँसी आती है। खाँसते-खाँसते)

अब तो सहा नहीं जाता। खाँस-खाँस के यह धौंकनी भी फटने को आ गई। न जाने प्राणों को इस टूटे घरौंदे से क्या प्यार बना है ? सब छोड़ गये—एक प्राण ही क्यों अटके पड़े हैं ? बालू की भीत पर मैंने घर बसाया था। (फिर खाँसी आती है) हाय ! नाव को मँझधार में छोड़कर माँझी ही चला गया। (आँखों में आँसू भरकर) तुम्हें ज़रा भी तरस नहीं आया प्राणाधार ! किधर चले गये तुम हमको तड़पता छोड़कर ? मेरा ख़याल नहीं था, तो विनू का तो करते ! बेचारा बापू-बापू करता हमेशा के लिए सो गया। उसकी वह दर्द-भरी निगाहें, उसकी वह नाकाम तलाश, रह-रहकर मेरे दिल को कँपा देती है। प्यारे

बच्चे ! भटकता फिर रहा है तू बापू से मिलने ? (फुसुकती है) मीना, मेरी फूल-जैसी बेटी आज अमीरों के घरों में ठोकरें खा रही है। (फिर खाँसी आती है) हाय !

(सहसा उसकी पड़ोसिन शीला का प्रवेश)

शीला—उमा रानी , क्या हुआ तुम्हें ? क्या कुछ दवा-दारू भी कर रही हो ? कल्लो कह रही थी कि बड़ा कष्ट है तुम्हें। देखो न, सदमा बर्दाश्त करना ही तो बहादुरी है। यह ठीक है कि तुम पर आफ़त का पहाड़ टूट पड़ा है, पर ईश्वर अपने प्यारों की ही तो परीक्षा लेता है।

उमा—बर्दाश्त तो कर ही रही हूँ दीदी ! क्या रोते रहने से गुज़ारा होता है ? और फिर रोकर दिखाना भी किसे ? ईश्वर, अगर कोई है, तो उस तक ग़रीबों की आहें नहीं पहुँचती मालूम देतीं। (फिर खाँसती है)

शीला—ऐसी निराश न हो बहन ! ग़रीबों की पुकार उस तक ज़रूर पहुँचती है। उसके बग़ैर हम लोगों का कौन सहारा है ?

उमा—आज दीवाली का दिन है। अमीरों के घरों में उजाले का समन्दर ठाठें मार रहा है, पर हमारे घरों में घनी अमावस झाँक रही है। काफ़ी रात हो गई है, पर अब तक न तो मीना ही आई है, न भैया रामधन। आज न जाने क्यों मेरा दिल बैठा-बैठा जाता है।

शीला—कमज़ोरी जो है। एक तरफ़ राजसी रोग, दूसरी तरफ़ ख़ूराक की कमी। यह रोग तो बड़ी ख़ूराक चाहता है। हाँ, मीना कहाँ काम करने जाती है ?

उमा—(खाँसते-खाँसते) यह पास के मुहल्ले में सेठ तनसुख हैं न, उनके पास।

शीला—यह सेठ तनसुख तो, सुना है, बड़ा ही कंजूस है।

उमा—हमारे साथ तो बड़ा अच्छा है दीदी। हम गिरतों को तो उसी ने सहारा दिया है।

(अकस्मात् उसको दर्द होने लगता है। शीला उसको सहारा देती है)

शीला—क्या हुआ ? क्या दर्द हो रहा है ?

शीला—खा ही गया है तुमको रोग।

(उमा आहिस्ता-आहिस्ता तकिये के सहारे बैठती है)

शीला—उनका कुछ पता नहीं लगा ? आदमी कैसे पत्थर-दिल होते हैं ? कुछ तो विचार करते !

उमा—क़िस्मत में ही जब यह लिखा था, तो किसी आदमी का क्या दोष ? (खाँसी आती है) हाय ! अब तो कटार-सी चुभ रही है।

(सहसा मिल-मज़दूर ग़ुलाम हैदर का प्रवेश। उसको देखकर शीला झेंप-सी जाती है। उमा ज़रा सँभलकर बैठ जाती है।)

उमा—कहो, कैसे आना हुआ भाई ?

ग़ुलाम—एक पुर-दर्द ख़बर लेकर आया हूँ बहन !

उमा—कैसी ख़बर ? किसके बारे में ?

ग़ुलाम—भैया रामधन के बारे में।

उमा—क्या हुआ भैया रामधन को ?

ग़ुलाम—आज अचानक वे मशीन की लपेट में आ गये। वे—

उमा—(चिल्लाकर) हाय, मैं लुट गई ! तुम भी छोड़ गये मेरे भैया ? मैं तो कूच की गठरी बाँधे बैठी थी, मुझे जाने देते ! अब क्या होगा ?

(बड़े ज़ोर से खाँसी आती है, फिर उसको दर्द होता है। वह बेहोश हो जाती है)

ग़ुलाम—(शीला से) क्या पास-पड़ोस में कोई डाक्टर है, मैं बुला लाऊँ ?

शीला—हाँ, इधर बाज़ार में डाक्टर प्रकाश हैं।

ग़ुलाम—क्या रोग है इन्हें ?

शीला—बड़ा रोग है ग़रीबी और बदक़िस्मती। बेचारी को ग़म ही खा गया है। इस पर अब यह बिजली आ गिरी है। क्या रामधन तुरत ही मर गये ?

ग़ुलाम—बड़ी कोशिश हुई, पर कुछ ही लम्हों में उनकी बोटी-बोटी पिस गई।

उमा—(बेहोशी से जागकर, पागलपन में) हट जाओ—हट जाओ !

भूचाल आया! गिरा—यह मकान! (बिस्तर से उठकर) चलो-चलो हटो। क्यों खड़े हो तुम? मुझे बाहर कूदने दो। (उठकर खिड़की से बाहर कूदने लगती है)

शीला—(पकड़कर) क्या कर रही हो उमा?—क्या तुम्हारा दिमाग़ फिर गया है?

(ग़ुलाम डाक्टर को बुलाने जाता है)

उमा—छोड़ दो मुझे!—मैं डायन हूँ। मैंने कइयों को खाया है। तुम्हें भी खा जाऊँगी। (पञ्जे खोलकर फटी आँखों से शीला की तरफ़ झपटती है। वह डरती हुई पीछे हटती है) नहीं जा सकता कोई बचकर मुझसे। मैं तुम्हारा ख़ून पीऊँगी—ख़ून! (शीला को गर्दन से पकड़ती है)

शीला—(छुड़ाकर) कुछ होश कर उमा! तुझे क्या हो गया है?

उमा—मैं लड़ूँगी—सबसे लड़ूँगी। ऐ! कहाँ है मेरा ज़िरह बख़्तर? मैं—

शीला—(ज़ोर से पकड़कर) लेट जाओ यहाँ! देखो अभी डाक्टर आता ही होगा! (उमा सिर हिलाकर सोचती-सोचती लेट जाती है) बदक़िस्मत मीना!

उमा—मीना?—मीना?—क्या हुआ तुझे?—बेटी! तेरे बिखरे बाल, तेरी फटी-फटी आँखें क्या हुआ तुझे? (उठकर हाथों को अकड़ाती है। शीला ज़बर्दस्ती लिटा देती है, तो लेट जाती है)

शीला—कुछ भी तो नहीं हुआ! तुझको ही कुछ हो गया है। (हाथ लगाकर देखती हुई) ओह! जिस्म अंगारों की तरह तप रहा है। मालूम देता है कि बुखार दिमाग़ पर असर कर गया है।

उमा—(बेचैनी से हिलकर) मीना! मीना! मेरी बेटी!

(उसी समय मीना, मिस्टर रहमान, मिस्टर कौल और वनिता प्रवेश करते हैं)

मीना—(भागकर लिपटती हुई) माँ! माँ!

(उसी समय उमा का सर पीछे को लटक जाता है। डाक्टर कौल

उसको आगे बढ़कर सँभाल लेते हैं। नब्ज़ देखते हैं—स्ट्रैथोस्कोप से देखते हैं। फ़िकरमन्द-से होकर खड़े हो जाते हैं। उमा निर्जीव हो जाती है)

मीना—डाक्टर साहब ! मेरी माँ ! (रोती है)

शीला—बेचारी के चचा भी आज ही चल बसे।

रहमान—कैसे ?

शीला—मशीन में पिसकर। एक बोटी तक नहीं मिली।

मीना—हाय ! मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? (रोती है)

कौल—कैसी दर्दनाक हालत है ! न बाप, न माँ, न चचा।

रहमान—(मीना को थपथपाकर उठाते हुए) उठ तो मेरी बेटी ! क्या मैं तेरा अब्बा बन सकता हूँ ? इस सूनी दुनिया में कभी एक तोतली ज़बान मुझे भी अब्बा बुलाया करती थी। आज सब कुछ हासिल करके भी मुझे एक वाहिद ख्वाहिश है "अब्बा" बनने की। क्या तू मुझे वह न्यामत दे सकेगी ?

मीना—(आँसू-भरी आँखों से रहमान से लिपटकर) अब्बा !—पर अम्मी ?

रहमान—वह बहिश्त में हमारा इन्तज़ार करेगी रानी ! ख़ुदा उस पाक रूह को बहिश्त अता करे !

(सब हाथ ऊपर करके दुआ माँगते हैं)

(पर्दा गिरता है)

तीसरा अंक

दृश्य १

(सेठ तनसुखराय का बग़ीचा। उनका पी० ए० दलपत उनके बेटे मङ्गू और बेटी सोमा के साथ दाख़िल होता है। उसने एक बिल्ली का बच्चा उठा रक्खा है। दोनों बच्चे उसपर झपटे जा रहे हैं।)

मङ्गू—चचा! चचा! यह बच्चा मैं लूँगा।

सोमा—आया बड़ा लेनेवाला। यह बच्चा तो मैं लूँगी।

दलपत—अच्छा देखो, सेठानीजी से चक्कू ले आओ। आधा-आधा बाँट दूँ।

सोमा—हाय! हाय! (नाक-भौंह सिकोड़ती है)

मङ्गू—मैं चक्कू ले आता हूँ। (जाने लगता है)

सोमा—अच्छा चचा, मैं नहीं लूँगी!

दलपत—माई गुड गर्ली! तू से ठानीजी का ठीक रूप जो है। बच्चा रक्खेगी, तो दूध भी पिलाना पड़ेगा। न होगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। क्यों भैया मङ्गू?

मङ्गू—चचा! तुमने सोलह आने ठीक कहा है। इन माँ-बेटी को रात-दिन जमा करने की ही लगी रहती है। मुझे तो यह मक्खीचूसपन बहुत बुरा लगता है।

सोमा—क्या कहने सखी बाबू के! माँ को गालियाँ देते शर्म नहीं आती? कह दूँ माँ को?

मङ्गू—कह दे—कह दे!

दलपत—नहीं भई, नहीं। बेचारा यों ही पिट जायगा। देखो

मुन्नी ! मैं तुम्हें बिल्ली का एक गाना सुनाऊँ। मुझे याद आ गया है। हमारी पढ़ानेवाली एक मेमसाहबा थीं, उनका एक कैटी था। उसके साथ खेलते हुए वे गाया करती थीं।

सोमा—उस मेम के साथ आप भी गाया करते थे ?

दलपत—हाँ—हाँ—कभी-कभी। अब देखो मङ्कू ! तुम इस कैटी को पकड़ लो। मैं अँगरेज़ी ताल में सुर मिलाकर वह गाना गाऊँ।

मङ्कू—और अगर इसने काट खाया ? मैं नहीं पकड़ूँगा चचा !

दलपत—क्या मुज़ायक़ा है ? मैं स्पिरिट लगा दूँगा।

मङ्कू—ना-ना चचा ! सोमा को पकड़ा दो।

सोमा—मैं बिल्ली से खाने के लिए ही रक्खी हुई हूँ ? नहीं पकड़ूँगी मैं !

दलपत—अच्छा-अच्छा, छोड़ो झगड़े को। मैं ही पकड़े रक्खूँगा। (बिल्ली को पुचकारते हुए) ओह, माई स्वीट कैटी !

(ट्यून बजने लगती है। दलपत नाच-नाचकर गाने लगता है। मङ्कू और सोमा भी साथ-साथ नाचने लगते हैं)

ओह माई स्वीट कैटी—माई लिट्टिल स्टार,
दाऊ आर्ट रिनौन्ड—वीयर ऐंड फ़ार।

वैन यू पर ऐंड वैन यू म्यू—एथ्रिप्रल वाइ ब्रेट्स इन माई नर्वस—
ओ वैन यू चेज़ ए रैट इन हेस्ट यूअर सपलनैस ग्रेट्ली सर्वस।

(अभी आख़िरी मिसरा बोला ही जा रहा होता है कि सेठ तनसुखराय आ जाते हैं। हाथ में छड़ी है। दाँत पीस रहे हैं। छड़ी फटकारते ही टुकड़े-टुकड़े होकर गिर जाती है। बच्चे डर जाते हैं)

तनसुखराय—यह क्या हो रहा है मिस्टर दलपत ? यह अँगरेज़ी गाना और मेरे घर में ? ओ लड़के-लड़की ! चलो यहाँ से। दोनों की टाँगें तोड़कर रख दूँगा, अगर ऐसा-वैसा गाना सीखा। चलो।

(दोनों भाग जाते हैं)

दलपत—सेठ साहब! यह ऐसा-वैसा गाना नहीं। इसे तो हमारी मेम साहबा गाया करती थीं।

तनसुख—(झुककर दलपत को ऐनक लगाकर देखते हुए) हैं। तुम्हारी मेम साहबा? तुमने क्या विलायती औरत से शादी कर रक्खी है? तो जाओ बाबा यहाँ से। तभी तो तुम्हारी नस-नस से अँगरेज़ी फूटी पड़ती है।

दलपत—ओह वैग यूअर पार्डन!

तनसुख—(उछलकर एक तरफ़ हटकर) बचाये राम! यह क्या लच्छेदार अँगरेज़ी बोली।

दलपत—माफ़ फरमाइए सेठ साहब! कालिज में हमें एक मेम साहबा पढ़ाया करती थीं, उनका ज़िक्र कर रहा था।

तनसुख—यह कहो न— मुझे तो फ़िक्र हो गई थी कि अब मुझे नया पी० ए० देखना पड़ेगा। अच्छा भाई, आज का अख़बार पढ़ा?

दलपत—अभी तो नहीं।

तनसुख—तो फूटी क़िस्मत! दोपहर होने को आई और अख़बार अब तक नहीं देखा। न जाने अब क्या बाज़ार-भाव होगा! तुम पर रहा जाय तो सब चौपट ही हो।

दलपत—ओह नैवर माइंड सेठजी। मैं अभी पढ़कर सुनाता हूँ। (जल्दी से बाहर जाता है)

तनसुख—कभी-कभी पढ़-लिखके भी अदमी गधे का गधा ही रहता है।

(दलपत का प्रवेश। हाथ में अख़बार है)

दलपत—ओह! सेठ साहब! बड़ा ज़बर्दस्त आर्डिनैन्स निकला।

तनसुख—क्या?

दलपत—स्टाक करनेवाले को दस-बरस क़ैद।

तनसुख—क़ैद? तो क्या किया जाय, मिस्टर दलपत?

दलपत—बस इस्टाक ख़लास कर दिया जाय।

तनसुख—तो कोई तरीक़ा सोचो।

(सेठजी के नौकर का प्रवेश)

नौकर—बाहर कोई सेठ साहब मिलने आये हैं।

तनसुख—बुला लाओ अन्दर। शायद कोई इस्टाक लेनेवाला ही हो मिस्टर दलपत !

दलपत—शायद।

(नौकर सेठ साहब के साथ आता है)

तनसुख—आइए! आइए! बड़ी कृपा की। कैसे आना हुआ ?

सेठ—यही कुछ सौदे के लिए आया हूँ।

तनसुख—कहाँ से आना हुआ ?

सेठ—यहीं आसनसोल से आया हूँ। क्या कुछ तैयार माल मिल सकेगा ?

दलपत—हाँ—हाँ !

तनसुख—(बात काटकर) देखिए सेठ साहब ! घर आये का आदर तो करना ही पड़ता है। अब इन्कार कैसे किया जावे ?

दलपत—जी हाँ, हौस्पिटैलिटी के ख़याल से—

तनसुख—नहीं, नहीं; अस्पताल के ख़याल से नहीं, यह तो सिर्फ़ सेठ साहब के मुँह का मुलाहज़ा है। अस्पताल के लिए कौन इस्टाक देता है ?

दलपत—ओह आई डिड नाट मीन इट। मेरा यह मतलब न था।

तनसुख—हाँ हाँ। (सूखी-सी हँसी हँसता है)

सेठ—तो कितना माल दे सकिएगा ?

तनसुख—माल का क्या सेठ साहब ? भगवान् की दया से बहुत-कुछ है। हें-हें-हें—

सेठ—बड़ी मेहरबानी ! अच्छा, तो भाव ?

तनसुख—भाव क्या करना ? जो मन चाहे, दे दीजिए।

दलपत—फ़ाइन—फ़ाइन। हमारे सेठ साहब जैसा दिल किसी-किसी ने ही पाया है। (चापलूसी की हँसी)

सेठ—माल जब आपका है, तो भाव तो आपको ही करना होगा सेठ साहब !

दलपत—हाँ, ज़रूर—ज़रूर।

तनसुख—अच्छा तो देखिए—माकट में कहीं एक दाना नहीं, पर आपकी कृपा से, हें-हें-हें, यहाँ सब कुछ है।

सेठ—जी हाँ, जहाँ फूल होंगे, वहीं तो भौंरे आयेंगे। मुझे पक्का यक़ीन था कि आपके पास आकर मुझे ज़रूर कामयाबी होगी। अच्छा तो फ़र्मा दीजिए।

तनसुख—क्या कहूँ ? शर्म मालूम देती है। हें-हें-हें।

सेठ—व्यापार में क्या शर्म सेठ साहब ! फ़र्मा दीजिए।

दलपत—हाँ-हाँ-हाँ—हें-हें-हें।

तनसुख—तो देखिए, २०) मन लगा दीजिएगा।

सेठ—मञ्जूर। बड़ी मेहरबानी। बड़ी मेहरबानी। तो मैं ज़रा अपने साथियों से सलाह कर लूँ। अभी एक मिनट में हाज़िर होता हूँ। (जाता है)

तनसुख—(उछलकर दलपत के हाथ पर हाथ मारते हुए) इसको कहते हैं सौदा। अब तो पाँचों उँगलियाँ घी में हैं।

(सहसा सेठ का पुलिस के साथ प्रवेश)

सेठ—और सर कढ़ाई में है। (क़हक़हा लगाता है)

(तनसुख और दलपत दुबककर खड़े हो जाते हैं)

सेठ—सेठ साहब ! मैं ज़रा आपके साथ अपना तआरूफ़ करवा दूँ। मेरा नाम है वाजिदअली। मैं सी० आई० डी० का इन्सपेक्टर हूँ। आपसे मिलकर निहायत ख़ुशी हुई। आपकी मेहमाननवाज़ी का शुक्रिया। अब ज़रा चलिए, मैं स्टाक की रक़म अदा करवा दूँ।

तनसुख—माफ़ कीजिए इन्सपेक्टर साहब। जो ख़िदमत—

इन्सपेक्टर—आपकी ख़ूब ख़िदमत होगी। अब चलिए। बाहर कार इन्तिज़ाम कर रही है।

दलपत—अच्छा, तो मैं इजाज़त चाहता हूँ। (जाना चाहता है)

इन्सपेक्टर—ज़रा ठहरिए पी० ए० साहब ! आपका भी तो चार आने हिस्सा है न ? तो ज़रा चवन्नी भर सेवा करवा लीजिए।

दलपत—ओह नैवर माइंड। मेरा हिस्सा सेठ साहब को ही दे दीजिएगा। हें-हें-हें—

इन्सपेक्टर—ऐसा कभी हो सकता है ? ऐसा करके हमें उम्र भर का गिला सर पर रखना है ? अच्छा तो तशरीफ़ ले चलिए। चलिए सेठ साहब !

तनसुख—इन्सपेक्टर साहब ! मैं ज़रा अन्दर हो आऊँ ? सेठानी जा—मेरे बच्चे (रोता है)

इन्सपेक्टर—रोइए नहीं सेठ साहब ! आप जल्दी ही आ जायेंगे। घबराने की कोई बात नहीं।

दलपत—मैं अपने डैडी का एक ही बेटा हूँ। मुझे छोड़ दीजिए।

इन्सपेक्टर—मैं तो आपको ज़रा मोटर की सैर करने ही ले जा रहा हूँ। घबराइए नहीं।

(दोनों रुआसे-से होकर चलते हैं। पीछे-पीछे पुलिस जाती है)

दृश्य २

(मिस्टर रहमान का बँगला। अकेली खड़ी मीना उदासी से गा रही है। समय सायंकाल)

मीना—मेरी नन्हीं-सी बगिया में—चली ख़िज़ाँ की बयार—

झुलस गये खिले फूल,
पग-पग पर बिछे शूल,
हरियाली गई, उठी धूल,
बैठे पञ्छी हृदय हार—मेरी
आशा-कलियाँ गिरीं टूट,
बालू के घरौंदे गये फूट,

सङ्गी-साथी गये छूट,
टूटे झक्खड़ से नीड़-डार—मेरी०

अब तक अब्बा आये नहीं। इतनी देर क्यों लगा दी ?

(पाँवों के पञ्जों पर चलते रहमान पीछे से आकर मीना की आँखें बन्द कर लेते हैं)

मीना—अब्बा !

रहमान—(आँखें छोड़ते हुए) क्या सोच रही थी बिटिया ?

मीना—यही सोच रही थी कि अब्बा आये क्यों नहीं ?

रहमान—मेरी इस ज़िन्दगी के रेगिस्तान में ख़ुदा ने तुझे नख़लिस्तान बनाकर भेज दिया है। मेरी सूनी ज़िन्दगी को तूने फिर से गुञ्जान बना दिया है।

मीना—यह दिखलावा है अब्बा ! आप सिर्फ़ मेरा मन रखते हैं।

रहमान—पगली कहीं की ! यह ख़याल तुझे कैसे आया ?

मीना—आप अब्बा ! सुबह निकलते हैं। शाम को घर वापस आते हैं। दिन भर मुझे याद तक नहीं करते।

रहमान—कौन कहता है यह ? चपत लगाऊँ उसे। तू तो मेरे दिन के एक-एक लम्हे में बसी है।

मीना—अब्बा ! बड़े चापलूस हैं आप ! (हँसती है)

रहमान—चल नटखट ! (क़हक़हा लगाता है)

(रहमान साथ के कमरे में कोट उतारने जाता है। मीना आवाज़ देकर कहती है)

मीना—अब्बा ! आज तुम्हारे पीछे एक अजीब बात हुई।

रहमान—(लौटकर) क्या बात ?

मीना—एक भिखारिणी इधर आ निकली थी। निहायत अच्छा गाती थी वह। उसके साथ एक जवान लड़की थी। उसका गला इतना सुरीला था कि क्या कहूँ ? मैं उनको माँ-बेटी समझती रही। दोनों न जाने कब की भूखी थीं। मैंने उनको खाना खिलाया अब्बा !

रहमान—बड़ा अच्छा किया तूने ! पर इसमें अजीब बात क्या हुई ?

मीना—मैं उस लड़की को हिन्दू समझती रही, पर असल में वह मुसलमान थी। अजीब बात यह थी कि उस हिन्दू फ़क़ीरनी की मुसलमान बेटी थी।

रहमान—इसमें अजीब बात क्या है बिटिया ? अब देख तो, मुसलमान अब्बा की तू हिन्दू बेटी नहीं ?

मीना—हाँ, इसमें अजीब बात होनी तो न चाहिए, पर न जाने क्यों हम लोगों ने ये भेद-भाव की दीवारें खड़ी कर रक्खी हैं।

रहमान—ये दीवारें हमारी बदक़िस्मती की मोर्चाबन्दी हैं। एक ही मुल्क में पैदा होकर, एक ही अन्न और जल से नशोनुमा पाकर भी हम एक दूसरे से इतने दूर हैं ! अभी कल मिस्टर कौल मुझे बता रहे थे कि तुम्हारा मेरे पास रहना कुछ लोगों को बहुत खटक रहा है। यह हिन्दुस्तानियों के क़यास से बाहर की चीज़ है कि एक हिन्दू लड़की मुसलमान के घर में रहे। काश ! हिन्दू-मुसलमान एक हिन्दुस्तानियत को अपना सकते !

मीना—अब्बा ! वह लड़की इसी मजमून का एक गाना गा रही थी। उसकी धुन अभी तक मेरे दिमाग़ में घूम रही है।

रहमान—तो तूने उस गाने को याद कर लिया होता।

मीना—मैंने उसको नोट कर लिया है।

रहमान—तो ला सुना तो सही।

मीना—पर मैं वैसा थोड़े ही गा सकूँगी।

रहमान—कोई मुज़ायक़ा नहीं। मुझे तो तेरा गाना बहुत पसन्द है।

मीना—अब्बा ! बनाते हो मुझे ?

रहमान—नहीं—नहीं, दिल से कहता हूँ। जा, ला तो वह गाना ! आज तू और मैं मिलकर गायें।

मीना—आप भी गायेंगे अब्बा ? तब तो लाती हूँ। (भाग-कर जाती है)

रहमान—हिन्दू भिखारिणी के साथ एक मुसलमान लड़की। जवान। मेरी सुल्ताना भी तो जवान होनी चाहिए। सुल्ताना..... अब तो वह बीते सपने की तस्वीर-सी बाक़ी है। हाल के सपने में.....

(भागकर मीना दाखिल होती है)

मीना—ले आई अब्बा !

रहमान—अच्छा तो सुना।

मीना—ऐसे नहीं—साथ-साथ गाना होगा।

रहमान—अच्छा, गाऊँगा। तू शुरू तो कर।

(धुन बजती है। मीना गाना शुरू करती है। आहिस्ता-आहिस्ता रहमान भी साथ-साथ गाने लगते हैं)

ओ हिन्दू-मुसलमान ! बन जाओ एक जान !
इक माँ के तुम हो लाल,
मिल-जुल के हो निहाल,
अपनी बढ़ाओ शान,
रक्खो बड़ों की आन,
ओ हिन्दू-मुसलमान ! बन जाओ एक जान !
जब भाई-भाई हो,
क्यों ना सहाई हो ?
कह दो यह सीना तान,
मिल-जुल के देंगे जान,
ओ हिन्दू-मुसलमान ! बन जाओ एक जान !
हो क्यो ग़रीब तुम ?
औ' बदनसीब तुम ?
पाके बड़ी यह कान,
बढ़-बढ़ के गाओ गान,
ओ हिन्दू-मुसलमान ! बन जाओ एक जान !

रहमान—कैसा जज़्बात से पुर गाना है ! क्या यह गाना वह लड़की अकेली गा रही थी ?

मीना—हाँ अब्बा !

रहमान—क्या उसका नाम भी सुना था तुमने ?

मीना—हाँ अब्बा ! उसको भिखारिणी "सुल्ताना" "सुल्ताना" पुकार रही थी ।

(रहमान घबराकर उठ खड़े होते हैं)

मीना—(पकड़कर) घबरा क्यों गये अब्बा ? क्या कुछ ख़याल आ गया ?

रहमान—(प्यार से थपथपाते हुए) हाँ, एक ख़याल ! काश ! उस वक्त मैं यहाँ होता ।

मीना—शायद वह घूमते-फिरते फिर आ जयँ अब्बा !

रहमान—नामुमकिन ! बहता हुआ दरिया का रौ कभी वापस नहीं आता । सोलह बरस गुज़र गये—

मीना—किस बात को अब्बा ?—

रहमान—(होश में आते हुए) किसी बात को नहीं रानी !—मैं यों ही बोल गया हूँ ।

मीना—अब्बा ! आप मुझसे कुछ छिपा रहे हैं ।

रहमान—तुझसे ? चल पगली ! (उसे प्यार से थपथपाते हँस देता है)

(कोई दरवाज़ा खटखटाता है)

रहमान—आइए ।

(मिस्टर कौल दाख़िल होते हैं)

रहमान—आइए मिस्टर कौल ! (हाथ मिलाता है) आप अकेले ही आये ?

कौल—हाँ, विन्नो को ले आता; पर मीना ने तो न बुलाने की क़सम उठा रक्खी है, तो कैसे लाता ?

मीना—चचा, मैं तो हज़ार बार कहती हूँ ।

कौल—हमने तो एक बार भी नहीं सुना । (हँसते हैं । रहमान उनकी हँसी में हँसी मिलाते है)

मीना—तो लाऊँ माला और लगूँ रटने ?

कौल—यह बात ? (हँसते हैं) तो लो, भक्तों के रटते ही देवता आ पहुँचे। राधा और विन्नो दोनों तुम्हारे बग़ीचे की सैर कर रही हैं। मैंने तो उन्हें बहुत कहा था, पर वे कहने लगीं, मीना बुलायेगी, तो आयेंगी।

मीना—यह बात ? त लो मैं अभी लाई उन्हें।

(भागकर जाती है। कौल और रहमान उसकी तरफ़ देखकर हँसते रहते हैं)

कौल—बड़ी भोली है।

रहमान—दुनिया का कोई असर नहीं इस पर।

कौल—विन्नो का तो घर में दिल ही नहीं लगता। 'मीना' 'मीना' ही पुकारती रहती है।

रहमान—बड़ा प्यार है दोनों में। आज एक अजीब वाक़या हुआ दोस्त !

कौल—क्या ?

रहमान—आज १६-१७ बरस पहले की एक झलक आकर ग़ायब हो गई।

कौल—क्या मतलब ?

रहमान—ग़ालिबन् मेरी बेटी सुल्ताना मेरे दरवाज़े पर आकर लौट गई।

कौल—यह क्या कह रहे हो तुम ?

रहमान—यह बिल्कुल ठीक है। मैं घर में नहीं था। मेरी ग़ैर: हाज़िरी में एक भिखारिणी आई। उसके साथ एक जवान लड़की थी—'सुल्ताना'। मिस्टर कौल ! ग़ालिबन् यही मेरी सुल्ताना थी। पास आकर फिर वह दूर चली गई।

कौल—पर उसकी फिर से तलाश हो सकती है।

रहमान—तलाश ? उसकी तलाश करते १७ बरस बीत गये। उसकी एक झलक पर, उसके एक लफ़्ज़ पर, मैं अपना सब कुछ लुटा सकता हूँ।

(मीना विन्नो को पकड़कर ले आती है। राधारानी पीछे हैं।)

मीना—लो चचा! पकड़कर ले आई। (दोनों हँसती हैं)

कौल—शाबाश! (हँसते हैं).

रहमान—(राधारानी से) आइए, तशरीफ़ रखिए। (राधारानी बैठती हैं)

वनिता—चचा! आज तो मैं तुमसे कहानी सुनकर जाऊँगी।

रहमान—कहानी? ले सुन। एक था तोता, एक थी तोती—

वनिता—ऊँ हूँ। यह कहानी नहीं। मैं तो चचा की अपनी कहानी सुनूँगी।

रहमान—पर सुनके डर जायगी।

राधा—तो क्या भूत की कहानी सुनाओगे?

कौल—अच्छी मेहमान आई हो कि भूत ही बनाने लगी हो।

मीना—मैं नहीं सुनाने दूंगी।

कौल—अच्छा तो चलो, मिलकर सैर को चलें। आज मौसम कितना सुहावना है।

रहमान—हाँ, यह ठीक है।

वनिता—चचा, टाल रहे हो न?

रहमान—नहीं, नहीं, ज़रूर सुनाऊँगा। फिर किसी दिन!

राधा—अच्छा, कभी न कभी तो वह दिन आयेगा ही। लो मैं लड़कियों को तैयार करूँ। तुम भी कार पर पहुँचो।

(वनिता, मीना, राधा जाती हैं)

रहमान—कहानी! (मुस्कराते हुए) विन्नो और राधा कहानी जानते हुए भी नहीं जानतीं।

कौल—(मुस्कराते हुए) कुदरत ने न जाने कितनी चीज़ें इन्सान से पोशीदा रक्खी हैं।

(दोनों अपने-अपने ख़याल में महव हैं। परदा गिरता है)

दृश्य ३

(कलकत्ता के समीप एक सुनसान रास्ता। रियाज़ और उसके बच्चे जा रहे हैं। समय मध्याह्न)

परवेज़—अब्बा, अब तो चला नहीं जाता।

रियाज़—बेटे! थोड़ी ही दूर और है। बाज़ार आने को है। वहाँ ज़रूर कुछ खाने को मिल जायगा। देख तो तेरी हमशीरा कितनी हिम्मत से चली जा रही है।

ज़ोहरा—भैया! हिम्मत कर। वह देख सामने ही तो बाज़ार है।

परवेज़—मैं तो अब एक क़दम भी नहीं चल सकता।

ज़ोहरा—मैं उठा लूँ तुझे?

परवेज़—अब्बा उठा लें!

रियाज़—मेरे बेटे! मुझमें भी अब उठाने की हिम्मत नहीं। तुमको तो माँगकर, जैसे भी है, कुछ न कुछ खिलाता आया हूँ। मैंने तो तीन दिन से कुछ नहीं खाया। अब तो मैं अपना बोझा लिये ही चल सकता हूँ।

परवेज़—तो मैं तो बैठा हूँ यहाँ। (हिम्मत हारकर बैठ जाता है)

रियाज़—अच्छा तो तुम दोनों यहाँ बैठो। मैं तुम्हारे लिए बाज़ार से कुछ ले आऊँ।

(बच्चे बैठ जाते हैं। रियाज़ जाना चाहता है। आगे से आते हुए अनिल बाबू मिलते हैं)

रियाज़—बाबू, बाज़ार कितनी दूर है यहाँ से?

अनिल—क्या काम है बाज़ार में?

रियाज़—बाबू! बर्दवान से चला आ रहा हूँ। साथ बच्चे हैं। सुना था, कलकत्ता में चावल का बहुत स्टाक आया है। उसी की तलाश में आया हूँ। ख़याल है, यहीं कहीं चाकरी करूँ और अन्न-अनाज से इन्हें पालूँ।

अनिल—स्टाक सुन तो बहुत रहे हैं; पर बाज़ार में तो एक दाना

भी नज़र नहीं आता। बाज़ार साँय-साँय कर रहा है। कहीं भी कुछ खाने को नहीं मिलता। हाँ, एक जगह मिल सकता है! (व्यंग्यमय हँसी)

रियाज़—कहाँ?

अनिल—अमीरों के दरवाज़ों पर. उनके महलों की छाया में उनकी जूठन के टुकड़े मिल सकते हैं; पर उसके लिए बड़ी हिम्मत चाहिए।

रियाज़—क्यों बाबू?

अनिल—वहाँ आदमियों और कुत्तों में झगड़े होती हैं। टुकड़ों के गिरते ही उसपर दोनों टूट पड़ते हैं। कुत्तों के मुँह में से नोच-नोचकर इन्सान पेट की आग बुझाना चाहते हैं। यह सब एक शानदार तमाशा होता है, जो अमीर, उनके बच्चे और नौकर महलों की खिड़कियों से देखते हैं।

रियाज़—बाबू! तो मैं क्या करूँ? (लाचारी से देखता है)

अनिल—(सूखी पागलपन की हँसी हँसकर) क्या करूँ? (गम्भीरता से) वक्त अपने आप सब कुछ करवायेगा। भूख अपने आप सब कुछ करवायेगी। दुनियाँ के बड़े-से-बड़े दुश्मन का मुक़ाबला हो सकता है, पर भूख के भेड़िये का नहीं। मैं भी तुम्हारी तरह मुसीबतों के समन्दर में डगमगाकर निकल आया हूँ। आज मेरे कन्धे हल्कापन महसूस कर रहे हैं।

रियाज़—कैसे?

अनिल—(फिर पहले पागलपन की हँसी हँसकर और फिर गम्भीर होकर) फेंक दो इस जुए को। तोड़ दो इन रिश्तों को। क्या रक्खा है इनमें? सब कुछ उस ख़ुदा पर छोड़ दो। (व्यंग्यमय हँसी हँसकर) जिसने इस कायनात को बनाया है (दाँत पीसकर) वह परवरदिगार! तड़पतों को तड़पानेवाला, मायूसों को मायूस करनेवाला, नादारों को भटकानेवाला, बच्चों को रुलानेवाला, दग़ाबाज़ और मक्कार! (फिर ज़ोर से पागलपन की हँसी हँसता है) जाओ,

जाओ, उसके ऊँचे इन्साफ़ के नज़्ज़ारे इन आँखों से देखो और ख़ून के आँसू बहाओ ! (जाता है)

रियाज़—(घबराकर ऊपर की तरफ़ देखकर) या अल्लाह ! कुछ तो तर्स कर !

(एक तरफ़ से शोर की आवाज़ आती है। फिर एक आदमी एक टोकरी में से रोटी के टुकड़े फेंकता हुआ चला आता है। उसके पीछे-पीछे आदमी, बच्चे और कुत्ते भागे आ रहे हैं। आपस में धक्का मुक्की, चीख़-पुकार और खसोट हो रही है। उसी भीड़ में रियाज़ के दोनों बच्चे भी शामिल हो जाते हैं। दो लड़नेवाले एक रोटी पर लड़ते-लड़ते रुक जाते हैं। एक लड़की बेहोश होकर गिर पड़ती है। रियाज़ सब कुछ घबराहट से देखता रहता है ।

एक भूखा—(जिसके हाथ में रोटी नहीं) ले जा तो टुकड़ा मुँह के पास ! अभी मुँह समेत नोच लूँगा।

दूसरा भूखा—(जिसके पास रोटी है) हाथ लगाकर देखना। रोटी के साथ-साथ तेरी बोटियाँ भी चबा जाऊँगा।

पहला भूखा—देख तो खा के।

दूसरा भूखा—देखो तो रोक के। (वह सारी की सारी रोटी मुँह में डाल लेता है। दूसरा उसके मुँह पर नाख़ून मारने की कोशिश करता है। बुरी तरह कशमकश होती है। वे कुत्तों की तरह एक दूसरे को दाँत दिखाते हैं और झपटा-झपटी करते हैं ! दूसरे विंग से मिस्टर रहमान और कौल दाख़िल होते हैं। मिस्टर रहमान के हाथों में एक पर्चियों की कापी है। मिस्टर कौल के साथ एक मैडिकल बाक्स है, दो नर्सें हैं। वे अन्दर आते ही गिरी हुई लड़की को देखना शुरू करते हैं, दवाई देते हैं। मिस्टर रहमान उन दोनों की तरफ़ जाते हैं, जो लड़ रहे हैं)

रहमान—अरे भाई ! क्यों कुत्तों की तरह एक रोटी के टुकड़े पर लड़ रहे हो ? भूल गये हो कि तुम इन्सान हो ?

पहला भूखा—बड़ी भूख लगी है बाबू! बड़ी भूख! पाँच दिन से एक दाना नहीं मिला।

दूसरा भूखा—(जल्दी-जल्दी मुँह की रोटी चबाकर खाने लगता है)

पहला भूखा—(उसके मुँह पर झपटकर) खा गया बाबू! खा गया!

रहमान—खाने दो इसे (पर्ची काटकर) लो पर्ची। यह सामने ही मिल के बाहर डिपो है। वहाँ से तुम्हें ख़ूराक मिल जाएगी।

पहला भूखा—(पर्ची लेकर) परमात्मा तुम्हारा भला करे।

दूसरा भूखा—बाबू! उस डिपो में तो माल है ही नहीं।

रहमान—अब आ गया है। एक बड़े सेठ ने बहुत-सा माल स्टाक कर रखा था। सेठ पकड़ा गया है और अब वह स्टाक सरकारी डिपो में आ गया है।

दूसरा भूखा—तो मुझे भी पर्ची दो बाबू!

रहमान—लो। (पर्ची काटकर देते हैं और वह जाता है)

मिस्टर कौल—(बेहोश लड़की का निरीक्षण समाप्त करके) लड़की की हालत नाज़ुक है। अस्पताल में भेजना ज़रूरी होगा। (अपने असिस्टेंट से) देखो स्ट्रेचर मंगवाओ और इसे अस्पताल ले जाओ।

(एसिस्टेंट जाता है)

(रियाज़ रहमान की तरफ़ बढ़कर)

रियाज़—ऐ रहमदिल फ़रिश्ते! एक पर्ची मुझे भी।

रहमान—लो भाई! (एक पर्ची काटकर देता है)

रियाज़—हम तीन कस हैं, एक मैं और दो बच्चे।

रहमान—तो लो एक पर्ची और।

रियाज़—(इधर-उधर देखकर) पर मेरे बच्चे?

कौल—तुम्हारे बच्चे तुम्हारे साथ नहीं थे?

रियाज़—थे तो—पर कहीं हजूम में शामिल हो गये हैं।

कौल—कहाँ के रहनेवाले हो तुम?

रियाज़—बर्दवान का।

कौल—तो भागो—तलाश करो उनको।

रियाज़—भागूँ ? (मायूसी से) ताक़त जवाब दे रही है। हाय मेरे बच्चे ! (लाचारी से जाता है)

(स्ट्रेचर आ जाता है ! लड़की को स्ट्रेचर पर डाला जाता है। स्ट्रेचर चलने लगता है। सहसा भिखारिणी का प्रवेश। घबराई हुई। बिखरे बाल। फटी-फटी आँखें)

भिखारिणी—(खोजती हुई नज़र से) सुल्ताना ! बेटी सुल्ताना ! कहाँ गई तू ? (स्ट्रेचर की तरफ़ भागकर) बेटी ! बेटी !—(रहमान और कौल दोनों घबरा-से जाते हैं। भिखारिणी स्ट्रेचर के पास जाकर सुल्ताना की बाँह झँझोड़कर) क्या हो गया तुझे ?

कौल—यह बेहोश है। तुम्हारा जवाब नहीं दे सकती।

भिखारिणी—मेरा जवाब नहीं दे सकती ? क्यों ? जिसको मैंने बचपन से पाला, जिसकी मीठी आवाज़ को मैंने प्यार और दुलार से पनपाया, वह क्यों नहीं बोल सकती ?

(फिर झँझोड़ती है। मिस्टर रहमान के चेहरे पर रुआसापन और घबराहट)

कौल—इसको तङ्ग न करो। मैं इसे अस्पताल भेज रहा हूँ।

भिखारिणी—अस्पताल ? क्यों ? वहाँ न भेजो ! वहाँ न भेजो ! वहाँ गया कोई विरला ही बचता है। डाक्टर साहब ! मेरी बेटी को मौत के हवाले न करो।

रहमान—(घबराहट और रुआसेपन से) मेरे घर ले चलो इसे। मेरे घर !

कौल—पर मिस्टर रहमान—

रहमान—(दीनता से) मेरे लिए मिस्टर कौल—मेरे लिए—मेरी ज़िन्दगी के लिए—

(कौल स्ट्रेचरवालों से कहते हैं)

कौल—मिस्टर रहमान के बँगले पर ले चलो।

भिखारिणी—तुम्हारा भला हो। डाक्टर साहब ! मेरी बेटी को बचाना।

(स्ट्रैचर जाता है। साथ-साथ नर्स और भिखारिणी भी)

रहमान—(चलना चाहते हैं, पर डगमगा जाते हैं। मिस्टर कौल उन्हें सँभाल लेते हैं) मिस्टर कौल! मेरे दोस्त! मुझे कुछ हुआ जा रहा है।

कौल—हिम्मत करो भाई! मैं समझ रहा हूँ तुम्हारे जज़्बात को—

रहमान—(आँसू भरकर) तुम समझ नहीं सकते। मेरे दिल के ज़ख्मों को देखने के लिए आँखें चाहिएँ मिस्टर कौल, आँखें—जिन्होंने ख़ुद ख़ून के आँसू रोये हों। मेरासब कुछ दाँव पर लगा दो डाक्टर! मेरी बेटी को बचा दो।

कौल—यह भी कहने की बात है रहमान! तुम्हारी बेटी क्या मेरी बेटी नहीं? चलो! देखो एक काम तुमको करना होगा—ज़ब्त—हिम्मत।

रहमान—पूरी कोशिश करूँगा दोस्त! पर—

कौल—(ले जाते हुए) इसमें कोई पर नहीं—यह डाक्टर को हुक्म है।

(दोनों जाते हैं)

दृश्य ४

(पुलिस लाक-अप। होर्डर सेठ तनसुख और उनके पी० ए० दलपत कोठरी में। बाहर बन्दूक़ लिये पहरेदार पहरा दे रहा है। सेठ और पी० ए० दोनों सींकचों के साथ सटकर खड़े हैं। समय (मध्याह्न)

दलपत—संतरी साहब! सूरज निकल आया?

संतरी—हाँ बाबू साहब!

तनसुख—पर हमें नज़र क्यों नहीं आता?

संतरी—आप कोठरी में जो हैं सेठ साहब!

तनसुख—कोठरी? यह क्या कालकोठरी है?

संतरी—जी हाँ।

तनसुख—(दलपत को पुकारकर) मिस्टर दलपत ! तो अब क्या होगा ?

दलपत—हौसला करना होगा सेठ साहब ! अब हो क्या सकता है ?

तनसुख—हौसला ? तुम्हारी लुगाई नहीं न, तुम्हारे बच्चे नहीं न, तभी तो हौसला कर रहे हो। मेरी सेठानी (आँसू भरकर) सूखी जा रही होगी। मेरे बच्चे बापू-बापू—

(ज़ोर-ज़ोर से रोने लगता है।)

दलपत—उनका तो मुझे भी अफ़सोस है।

तनसुख—वे तो रो-रोकर जान दे रहे होंगे।

संतरी—सेठ साहब ! यहाँ तो भगवान् को याद करो।

तनसुख—क्यों ? क्या माजरा है ?—क्या हमारी मौत आ पहुँची ? हाय मिस्टर दलपत !

(दलपत से लिपटता है)

दलपत—यही हमारे ललाट में लिखा था ! हाय सेठ साहब !

तनसुख—मेरे पेट में तो गड़बड़ हो रही है। दस्त आएगा—दस्त। अब मैं नहीं बचूँगा मिस्टर दलपत।

दलपत—संतरी साहब ! ज़रा ताला खोलना। जल्दी से।

संतरी—क्या बात है ?

दलपत—सेठ साहब को दस्त आ रहा है—दस्त।

तनसुख—हाँ दस्त ! (दर्द से मुँह बिगाड़ता है) जल्दी करना संतरी साहब ! वर्ना—

दलपत—कहीं बीच में ही न—

तनसुख—हाँ—आँ—नहीं—नहीं—(पेट को दबाता है। ऐसा मुँह बनाता है, जैसे टट्टी को रोक रहा हो)

संतरी—टट्टी तो अन्दर ही होना होगा सेठ साहब !

दलपत—अन्दर ? कहाँ ?—

तनसुख—अब तो निकली जाती है।

दलपत—जल्दी बोलो संतरी साहब !

संतरी—वह सामने पतरा पड़ा है। उसी पर।

(सेठ पिछले विंग की तरफ़ भागता है)

दलपत—पतरे पर टट्टी ? संतरी साहब ! क्या यहाँ कमोड न मिल सकेगा ? मुझे तो—

संतरी—(हँसकर) यह होटल नहीं बाबू साहब ! यह लाक-अप है।

दलपत—ओह आई सी (हैरतनाक नज़र से देखता है) नहाने के लिए गुसलखाना किधर है ?

संतरी—वह एक तरफ़। वहीं मशक से पानी मिल जायगा।

दलपत—ओह—ओह—ओह ! मशक से पानी ? यह तो बहुत—

संतरी—वह भी दूसरे तीसरे दिन।

दलपत—माई गुड गाड ! संतरी साहब ! तब तो जूएँ--

संतरी—हाँ, हाँ, जूएँ यहाँ बहुत हैं। गुच्छे के गुच्छे।

दलपत—(उछलकर एक तरफ़ हट जाता है) गुच्छे के गुच्छे ? कहाँ ?

संतरी—यहाँ इन्हीं कम्बलों में, जिन पर आप सोयेंगे।

दलपत—ओह माई गुड गाड ! तो हमें कम्बलों पर सोना होगा ?

संतरी—हाँ बाबू साहब !

दलपत—पर—बैड ?

संतरी—यह होटल नहीं, बाबू साहब ! पुलिस लाक-अप है।

दलपत—आइ सी—हें-हें-हें।

(सेठ तनसुख आते हैं)

दलपत—कहिए सेठ साहब।

तनसुख—यह तो बिल्कुल नरक है मिस्टर दलपत !

दलपत—अभी पूरा नरक नहीं देखा आपने।

तनसुख—हैं ?

दलपत—देखिए, वहाँ मशक के पानी से नहाना होगा, इन कम्बलों पर सोना होगा; इनमें जुएँ भी हैं !

तनसुख—(उछलकर) जूएँ ? यह जूएँ किसने पाल रक्खी हैं

संतरी साहब ?

संतरी—आप जैसे कई आये और कई गये। कई लाये और कई ले गए।

तनसुख—तो हम भी ? (सिर को खुजलाकर) देखना मिस्टर दलपत !

दलपत—(सिर को देखकर) मुझे तो डर मालूम होता है सेठ साहब ! मैंने तो इस जानवर को पहले कभी देखा नहीं।

तनसुख—ओह ! मुझे तो जूएँ ही जूएँ चलती मालूम देती हैं। ओह मिस्टर दलपत ! (खुजलाता है।)

दलपत—डाक्टर बुलाऊँ सेठ साहब ? संतरी जी ! डाक्टर !

संतरी—यहाँ डाक्टर का क्या काम ? यह अस्पताल नहीं बाबू साहब !

दलपत—ओह, आई सी—हें-हें-हें।

(एक आदमी रोटी लेकर आता है)

संतरी—रोटी ले लो सेठ साहब।

(आदमी आगे बढ़कर चार बड़ी-बड़ी रोटियाँ लटका कर आगे करता है)

तनसुख—हें ! यह क्या ? यह क्या चीज़ है ?

दलपत—यह तो किसी हाथी के तोड़े हुए कान मालूम होते हैं।

संतरी—यह रोटियाँ हैं रोटियाँ सेठ साहब !

तनसुख—रोटियाँ ? पर थाली ?

संतरी—थाली यहाँ नहीं मिलती !

तनसुख—ओहो मिस्टर दलपत !

दलपत—गज़ब हो गया, सेठ साहब।

तनसुख—तो पकड़ लो। (दलपत पकड़ता है) पर भाजी ?

संतरी—भाजी भी ले लीजिए।

तनसुख—कहाँ ?

संतरी—रोटी के ऊपर ही या उस बाटी में।

तनसुख—उस टट्टीवाली बाल्टी में ?

दलपत—माई गुड गाड ! अब क्या बनेगा सेठ साहब ?

तनसुख—और क्या बनेगा ? मौत सामने खड़ी है, मौत ।

संतरी—लीजिए न सब्जी ! कब तक खड़ा रहेगा यह ?

तनसुख—हाँ—हाँ—ले लो मिस्टर दलपत—ले लो ! (मिस्टर दलपत रोटियों पर भाजी डलवाता है)

दलपत—(भाजी को देखकर) सेठ साहब ! मेरा रुमाल जरा जेब में से निकाल दीजिए ।

तनसुख—क्या बात है ?

दलपत—बदबू ! तेल की बदबू ! यह कौन खायगा ?

संतरी—सब कुछ पेट खिलायगा बाबू साहब !

तनसुख—हाय पेट ! मिस्टर दलपत !

दलपत—बैडलक सेठ साहब ! (माथा पीटता है)

तनसुख—तो उस बाल्टी में रख लो । जब पेट माँगेगा, तो देख लेंग ।

दलपत—उसी बाल्टी में ?

तनसुख—क्या किया जाय ? जब ओखली में सिर दिया, तो मूसलों से क्या डरना ?

दलपत—बिलकुल ठीक । (रोटियाँ बाल्टी में रखता है)

तनसुख—अब क्या बनेगा मिस्टर दलपत ?

दलपत—बनेगा क्या ? अब जेल की तैयारी रखिए । यह तो उसका अक्स ही है ।

तनसुख—हमारी क़िस्मत तो फूट गई । नफ़ा करते-करते पूँजी ही लुटा बैठे ।

दलपत—बग़ैर कुछ मुनाफ़ा लिये मैं यों ही फँस गया ! कैसा बैडलक है !

(अचानक सी० आई० डी० इन्सपेक्टर मिस्टर वाजिदअली दाखिल होते हैं)

बुधिया—लो भई, चक्कर को देखकर मुझे ख़याल आ गया कि इस सुहावने दिन हम चक्कर बनाकर कोई गाना गाएँ।

सब—ज़रूर-ज़रूर।

(ट्यून बजने लगती है। सब ठाठ से चक्कर बनाकर गाने लगते हैं)

चल हिन्द के ओ मज़दूर—तेरे नैनों में होवे सरूर!
बन-बन के मौजें तू बढ़,
ज़ीना अरूज़ का तू चढ़,
क़ायम रहे तेरा गढ़,
तुझे फ़तह मिलेगी ज़रूर—चल०
परवाना तड़पता बन,
तू फूल महकता बन,
तू 'हक़' पै ऐसा तन,
झुक जाये सब ग़रूर—चल०

(गाना समाप्त होते ही मीना प्रवेश करती है)

मीना—क्या कहना, बड़े ठाठ से गाना हो रहा था?

बुधिया—(शर्माकर) आप हमें शर्मिन्दा करने को आई हैं।

मीना—नहीं, नहीं; हम तो तुम्हें अपनी कोठी पर दावत देने को आई हैं।

सुधिया—कैसी दावत?

मीना—बस यों ही। वहाँ तुम्हें गाना भी गाना होगा।

बुधिया—(सर हिलाकर) ऊँ-हूँ—कहाँ गाना, कहाँ हम?

कल्लू—मैं तो आज घोड़ा हूँ। गाना कैसे गाऊँगा?

मल्लू—मेरा हंटर खाकर, और क्या? (सब क़हक़हा लगाते हैं)

मीना—अच्छा भई मैं चल रही हूँ; एक-दो जगह और बुलावा देना है; तुम अब जल्दी ही पहुँचना।

बुधिया—(झिझककर) पर राजकुमारी जी!

मीना—क्या पर?

बुधिया—हम ग़रीब हैं। हमारे कपड़े—

मीना—कपड़ों का क्या है बुधिया ? दिल साफ़ चाहिए। मैं जानती हूँ, इन फटे चीथड़ों के नीचे कितना सुन्दर दिल है।

बुधिया—पर हमें शर्म आयेगी।

मीना—शर्म काहे की ? शर्म तो बुरे काम में होती है। तुम-हम सब मिलकर बैठेंगी। इसमें शर्म काहे की ? हाँ और देखो, तुमको हमारी कोठीवाले मन्दिर के आँगन में पहुँचना है।

सुधिया—मन्दिर कैसा ?

मीना—मेरे अब्बा ने कोठी में एक तरफ़ पूजा-मन्दिर बनाया है। उसका नाम "इबादतगाह" भी है।

सुधिया—उसके दो-दो नाम क्यों हैं ?

कल्लू—इसमें पूछने की क्या बात है ? अब देखो तो, मेरे दो नाम हैं या नहीं, एक कल्लू और दूसरा घोड़ा ?

मल्लू—तो लगाऊँ चाबुक ?

मीना—देखो भई ! मैं तुम्हें इसका मतलब समझाऊँ। पूजा का ही तो दूसरा नाम इबादत है। पूजा किसकी करते हैं हम ? ईश्वर की न ? उसी का दूसरा नाम है ख़ुदा। अब बताओ, एक ही जगह क्या हिन्दू-मुसलमान बैठकर पूजा या इबादत नहीं कर सकते ? दोनों के लिए मेरे अब्बा ने यह परस्तिश की जगह बनाई है।

बुधिया—भई, बात तो ख़ूब की है !

सुधिया—हाँ ख़ूब।

मीना—एक ही मुल्क में पैदा होकर, एक ही देश-माँ के जाये होकर, एक ही अन्न-जल खा-पीकर, हम मन्दिर और मस्जिद की बदौलत एक दूसरे से इतनी दूर हैं। क्या वजह है कि एक ही छत के नीचे मुसलमान नमाज़ और हिन्दू गायत्री नहीं पढ़ सकता ? यह तो एक झूठा भ्रम है।

कल्लू—तो तुम तो हिन्दू हो न ?

मीना—हाँ! मुझे फ़ख्र है कि मैं मुसलमान बाप की हिन्दू बेटी हूँ; नहीं, नहीं, हिन्दुस्तानी बाप की हिन्दुस्तानी बेटी हूँ।

बुधिया—सुना है, तुम्हारी बहन भी है, सुल्ताना?

मीना—हाँ, सुल्ताना मेरी बहन है। अच्छा तो जल्दी पहुँचना। मैं चलती हूँ। (जल्दी से जाती है)

बुधिया—यह अजीब माजरा है। हमें तो कुछ समझ में नहीं आता।

कल्लू—तो समझ के करना भी क्या है?—चल भई साईस! चमका अपना चाबुक!

मल्लू—चल भई घोड़े ज़ीन-सवार! (जाते हैं)

बुधिया—अच्छा भई, चलो तो हम भी चलें। उधर जाना जो है।

सुधिया—हाँ, हाँ।

(सब जाते हैं)

दृश्य ६

(पर्दा फटते ही इबादतगाह की स्टेज नज़र आती है। समय सायंकाल रिंगदार पर्दा ड्राप के तौर पर पड़ा हुआ है। मिस्टर कौल आते हैं और बोलते हैं)

कौल—देवियो और भद्र पुरुषो! मेरे भाई मिस्टर रहमान ने आज इस मजलिस की कारवाई को सरंजाम देने का काम मुझे सौंपा है। मैं तो डाक्टर हूँ। कड़वी दवाइयाँ पिला सकता हूँ। इंजेक्शन दे सकता हूँ। (मुस्कराता है) तो इससे बेहतर आज क्या कर सकूँगा? खैर! फ़र्ज़ फ़र्ज़ ही है और पूरा करना होता है।

आप आज जिस स्टेज के सामने बैठे हैं, यह 'इबादत-गाह' की स्टेज है। छोटी-सी स्टेज, जिसका मक़सद अलग-अलग हुए और बिछुड़े लोगों को मिलाना है। आज यह उसकी इब्तदाई रस्म है। आप लोगों ने तशरीफ़ लाकर इसको रौनक़ बख़्शी है।

अब कुछ आइटम आपके सामने पेश किये जाते हैं। सबसे पहले मीना, सुल्ताना और वनिता आपके सामने एक दुआ माँगेंगी।

(मिस्टर कौल जाते हैं। रिङ्गदार परदा फटता है। मीना, सुल्ताना, वनिता नज़र आती हैं। गाती हैं)

ओ दुनिया के मालिक जाग,
गाते हैं हम तेरा राग।
तू आपस की दुई मिटा दे,
मिल-जुलकर रहना सिखला दे।
ऐसी प्रेम की बंसी बजा दे,
इक-इक दिल पर जादू चला दे,
चमके जिससे हिन्द का भाग—ओ०
मन्दिर तेरा, मस्जिद तेरी,
फिर क्यों कहते मेरी तेरी?
बाप है तू सब ख़िलक़त तेरी,
पर अहमकपन ने है घेरी,
जगा जोत, मिल गायें राग—ओ०

(रिङ्गदार पर्दा खिंच जाता है। फिर मिस्टर कौल आते हैं)

कौल—अब कुछ मज़दूर बच्चे आपको एक ग़रीब का तराना सुनायेंगे। ग़रीब और अमीर आदमी की बनाई दीवारें हैं। उस परवरदिगार ने सबको एक-सा ही पैदा किया और एक-सा ही वापिस बुलाया है।

(जाते हैं। मज़दूर बच्चे आते हैं)

मज़दूर बच्चे—

हम हैं ग़रीब—ग़रीब—
नहीं हैं बदनसीब!—
न दाम हो तो क्या?—
न नाम हो तो क्या?—

ख़ालिक के हैं क़रीब—
ऐसे हैं ख़ुश-नसीब।
हम सूखी रोटी खायँ,
फिर भी अकड़ते जायँ,
खाने में बदनसीब,
जीने में ख़ुशनसीब।
हम हैं धधकती आग,
हम हैं वतन का भाग,
जो हम हैं बदनसीब,
तो कौन ख़ुशनसीब?

(मज़दूर बच्चे जाते हैं। पर्दा खिंच जाता है। फिर मिस्टर कौल आते हैं)

मिस्टर कौल—अब हमारे शहर की मशहूर आर्टिस्ट निर्मल बहनें हमको हिन्दुस्तानी नृत्य-कला का एक दिलकश नमूना दिखायेंगी)

(मि० कौल जाते हैं। पर्दा खिंचता है। निर्मल बहनें आकर नृत्य करती हैं और फ़रके जाती हैं। पर्दा खिंच जाता है। फिर मि० कौल आते हैं)

मिस्टर कौल—अब भिखारिणी माँ आपके सामने एक पुरसोज़ गाना पेश करेंगी। इनके लोचभरे तरानों ने न जाने कितने दिलों में बेदारी की लौ जगाई है।

(मि० कौल जाते हैं। भिखारिणी गाती हुई आती है)

बन्दे जीवन है इक गीत!
दुखिया बन्दे क्यों रोता है?
दुख में व्याकुल क्यों होता है?
चढ़ना और उतरना फिर-फिर—
यही गीत की रीत—बन्दे०
सुख आरोह स्वरों का जानो,
दुख में अवरोही पहचानो,

दोनों मिलकर राग बना है,
यह मत भूले मीत—बन्दे०
उस रसिया का कठिन रिझाना,
कहीं न चूके तेरा गाना,
चढ़ उतरी दोनों में रस हो,
तब है तेरी जीत—बन्दे०—

(भिखारिणी जाती है। पर्दा खिंचता है। फिर मिस्टर कौल आते हैं)

मिस्टर कौल—अब हमारा आख़िरी आइटम है। वह ख़ुद-बख़ुद बोलेगा। लीजिए, इन्तज़ार कीजिए।

(जाते हैं। पर्दा हटता है। मिस्टर कौल, वनिता और राधा दाख़िल होते हैं)

कौल—देखा बिन्नो! कैसी है यह कोठी और यह बाग़ीचा? यह हमारे दोस्त मिस्टर रहमान का है।

वनिता—पाप, बहुत अच्छा है। पर एक बात पूछूँ पापा?

कौल—हाँ, पूछ मेरी रानी!

वनिता—हमारी अपनी कोठी क्यों नहीं?

राधा—यह भी कोई पूछने की बात है? पर-उपकार से फ़ुरसत मिले, तो कोठी बने।

वनिता—यह ठीक है पापा? तो आप पर-उपकार क्यों नहीं छोड़ते?

कौल—अच्छा बिन्नो, तू बता, फूल जब चाहे, ख़ुशबू छोड़ सकता है?

वनिता—नहीं।

कौल—साँप जब चाहे, डसना छोड़ सकता है?

वनिता—नहीं, वह तो डसेगा ही।

कौल—तो हम अपनी ख़सलत क्यों छोड़ें? और यह कोठी रुपया तो क़िस्मत का तोहफ़ा है। पर-उपकार से कुछ बिगड़ता नहीं, बनता है। हमारी आक़बत—

राधा—आक़बत तो एक सपना है। अपनी हाल की दुनिया को देख भैया।

कौल—राधे! तुम्हारी-हमारी तो हमेशा ठनी ही रहेगी। बात तो वनिता की है अच्छा, तो बता वनिता, तू किसकी बेटी है?

(वनिता भागकर कौल से लिपट जाती है और कहती है)

वनिता—मैं तो पापा की बेटी हूँ।

(कौल हँसते हैं। राधा चिढ़कर)

राधा—यह कोई नई बात है, बस मैं जाती हूँ।

(जाने लगती है। आगे से भिखारी मिलता है)

भिखारी—बाबू! एक पैसा।

(राधा तड़पकर पीछे हट जाती है)

राधा—कौन है तू? यहाँ घुस आया है किसी की कोठी में– चल निकल!

भिखारी—भूख का सताया हूँ। भूख, एक तूफ़ान बनकर मेरे पेट में उठ रही है। हफ़्ताभर से कुछ नहीं मिला। दो टुकड़े रोटी दे दो।

राधा—चोट्टा कहीं का। निकल बाहर।

भिखारी—मैं चोर नहीं हूँ। मैं ख़ूँख़ार दरिन्दा नहीं हूँ।

वनिता—पापा! पापा! मुझे इसको देखकर डर मालूम देता है। निकालो इसे!

कौल—तुम कौन हो भई?

राधा—फिर पूछ रहे हो न वैसा ही सवाल? अपने पर तो हाथ सफ़ा करवाना ही था, अब तो दूसरे के घर में हो—निकालो इसे।

कौल—ज़रा ठहरो बहन! (भिखारी से) हाँ, तुम्हारा नाम क्या है?

भिखारी—फ़िरोज़ 'कैदी'!

वनिता—पापा! निकालो इसे। इतने बरस बाद यह कहाँ से आ धमका? मुझे डर लगता है।

(सहसा मिस्टर रहमान मुँह पर से मेक-अप के बाल उतार देते हैं और क़हक़हा लगाते हैं। वनिता और राधा हैरान होकर देखती हैं। कौल भी क़हक़हा लगाते हैं। मिस्टर रहमान चीथड़ों को उतार फेंकते हैं—नीचे से सूट निकल आता है)

वनिता—पापा! यह क्या?

रहमान—यह अपना वादा पूरा कर रहा हूँ बिटिया! इधर आ तो मेरे पास! कहानी सुनना चाहती थी न मेरी?

(वनिता भागकर मिस्टर रहमान से लिपट जाती है। रहमान पुकारते हैं)

मीनो! सुल्ताना! तुम भी आओ! भिखारिणी माँ, आओ तुम भी! आज मैं तुमको अपनी ज़िन्दगी की कहानी सुनाऊँ! उसकी एक झलक तुम सबने अभी देखी। कुछ बरस पहले एक बदक़िस्मती का दौर चला। एक जल्लाद क़ातिल ने मेरा सारा कुनबा क़त्ल कर डाला। मेरा बूढ़ा बाप, मेरी ज़ईफ़ माँ, मेरी कमसिन बीवी। सिर्फ़ एक यादगार है उस कुनबे की मेरी सुल्ताना! (सुल्ताना को बग़लगीर करता है) मुझपर भी उसने क़ातिलाना हमला किया, पर वह मेरे हाथों मारा गया। बदक़िस्मती से मुझे लम्बी क़ैद की सज़ा हुई। वहाँ से छूटकर मैं आया, तो एक लावारिस क़ैदी की शक्ल में मैं मिस्टर कौल के दरवाज़े पर पहुँचा। मैं था लावारिस क़ैदी फ़िरोज़—

वनिता—(बीच में बात काटकर) चचा, तुम थे फ़िरोज़ क़ैदी? मैं तो नहीं मानती।

राधा—हाय रे ग़ज़ब!

रहमान—(हँसकर) अभी तो तुमने देखा मुझे!

वनिता—यह तो आप खेल कर रहे थे हमारे साथ!

रहमान—हाँ, यह तो खेल ही था; पर वह था दुनिया की स्टेज पर असली ज़िन्दगी का ड्रामा! (दर्शकों से) साहबान! आप शायद सोच रहे होंगे कि मैं एक सनसनी खेज़ कहानी ड्रामे की शक्ल में पेश कर रहा हूँ। हाँ, यह कहानी तो ज़रूर है, पर है सच्चाई और

असलियत का जामा पहने हुए। बहुत वक़्त से मैं अपनी ज़िन्दगी को, लोगों की नज़रों में, पुर-राज़ और पोशीदा लिये हुए बैठा हूँ। आज मुझको एक लखपती देखकर आप शायद मेरी पिछली ज़िन्दगी का नक़्शा आसानी से न समझ सकें या न समझना चाहें, पर वह ज़िन्दगी हमेशा मेरी आँखों के सामने नाचती रहती है। वही एक शमा है, जो मेरी ज़िन्दगी की तारीकी में रोशनी की झलक दिखाती रहती है।

हाँ, तो सुनिए, कहानी का अगला हिस्सा।

डाक्टर कौल ने मुझे भरपेट खिलाया। मुझे अपनी साया में सोने की जगह दी; पर मुझे नींद कहाँ? मेरे सामने तो थी सुनसान और मायूस-कुन दुनिया। न घर था, न ज़र था, न कुनबा था। मैं बुरी तरह ज़िन्दगी की उधेड़-बुन में लगा था। उस कमरे के साथ ही, जिसमें मुझे सुलाया गया था, एक खाने का कमरा था। उसमें एक मेज़ पर ख़ालिस सोने का शमादान था। मुझे पीछे पता लगा कि मिस्टर कौल को वह शमादान एक रियासत से तोहफ़े की शकल में मिला था। बावजूद दिलो कशमकश के मैंने उस शमादान को चुराया।

मीना—पापा! आपने?

रहमान—(हँसकर) हाँ, मैंने! (दर्शकों से) आप बहुत हैरानी से आँखें फाड़-फाड़कर देख रहे हैं। लखपती रहमान और चोरी, शायद दो मुतज़ाद चीज़ें मालूम हों। पर आप क़यास फर्माइए, एक चिथड़ों में मलबूस बेबस और बेज़र इन्सान का जिसके सामने लालच हैबतनाक सूरत में दरपेश हो, जिसके सामने दुनिया एक अँधेरा हो। वह क्या करेगा उस सूरत में? दुनिया में जो चोरियाँ और डाके पड़ते हैं, उनमें से ९५ फ़ीसदी ग़रीबी, नादारी और भूख की बदौलत हैं। यह भूख ही सब अज़ाबों और तकलीफ़ों की जड़ है।

अच्छा, तो सुनिए—

मैं शमादान चुराकर भागा। उस वक़्त अभी सुबह के तीन बजे होंगे। क्यों मिस्टर कौल?

कौल—बिल्कुल ठीक। मुझे कुछ लम्हे बाद ही पता लग गया था।

वनिता—मुझे भी चचा। बुआ और मैं दोनों जग गई थीं।

रहमान—बिल्कुल ठीक। पर मेरा पीछा न किया गया। शमादान को बेचने की कोशिश करते हुए मैं पकड़ा गया। पुलिस की हिरासत में मैं मिस्टर कौल के सामने लाया गया। वह नज़्ज़ारा मुझे कभी नहीं भूलता। मिस्टर कौल की आँखों में मुझे एक रब्बी नूर नज़र आया। मेरा दिल धड़क रहा था। मैंने पुलिस के सामने चोरी का इक़बाल कर लिया था। मेरे सामने जेल के आहिनी सींकचे तनकर खड़े थे; पर मिस्टर कौल ने, इस रहम के फ़रिश्ते ने, मुझे इन्सानों की दुनिया में रोक लिया।

कौल—मिस्टर रहमान! क्यों शर्मिन्दा कर रहे हैं आप मुझे?

रहमान—एक पाक-हस्ती की ज़िन्दगी में शर्म की कोई जगह नहीं। (दर्शकों से) देखिए साहबान! मिस्टर कौल ने मुझे पुलिस के पञ्जे से ही नहीं छुड़ाया, बल्कि वह निहायत क़ीमती शमादान मुझे, अपने ही क़सूरवार मुजरिम, को अता कर दिया। उस शमादान को मैंने पचास हज़ार में बेचा। उसी की पूँजी पर इस रहमान-मिल का ढाँचा खड़ा हुआ। हाँ देखिए—आप शायद सोच रहे होंगे कि मैं फ़िरोज़ से रहमान क्यों बन गया? मुझे फ़िरोज़ नाम से नफ़रत-सी हो गई थी। उस नाम के साथ जेल, ज़िल्लत और बेइन्तहा तकलीफ़ें बाबस्ता थीं। मैं अपनी उस ज़िन्दगी से उकता गया था।

मिस्टर कौल के वे लफ़्ज़ मेरे कानों में गूँज रहे थे—"ज़िन्दगी का नया दौर शुरू करो फ़िरोज़! साफ़ सुथरा और ख़ूबसूरत! ख़ुदा तुम्हारे काम में बर्कत दे"।

यह सब उस ख़ुदा का ही जलाल है। आदमी तो बहुत कमज़ोर और नाचीज़ है। उसकी क्या हस्ती है?

मेरी सूनी ज़िन्दगी में बेटी मीना आई। उसने मेरे दिल के रेगिस्तान में नख़लिस्तान बसाया। बेटी सुल्ताना की याद मुझे पागल बना देती

थी। भिखारिणी माँ ने मुझे मेरी यह खोई हुई दुनिया ला दी। आज मैं एक ख़ुशक़िस्मत हूँ।

मेरी एक दिली तमन्ना है। उसका भी आज ऐलान कर देना चाहता हूँ। मैं चाहता था कि मिस्टर कौल रहमान-मिल की मिल्कीयत अख़्तयार कर लेते; पर वे रज़ामन्द नहीं। उस परवरदिगार ने उनकी और मेरी ज़िन्दगी को बाबस्ता कर दिया है। इसी लिए वे और मैं दोनों मिलकर ही इस मिल के मालिक होंगे। (हर्ष-ध्वनि)

यह मिल इस मुल्क के दो अहम सवालों को हल करने की कोशिश करेगी—एक हिन्दू-मुस्लिम इत्तिहाद और दूसरा भूख। मैं तो समझता हूँ कि भूख ही हमारी सबसे बड़ी उलझन है। इसका ख़ातमा अपने मुल्क की बदक़िस्मती का ख़ातमा है। क्यों मिस्टर कौल ?

कौल—बिल्कुल ठीक है मिस्टर रहमान !

राधा—(कौल से) भैया ! आज मुझे तुम्हारे वे लफ़्ज़ रह-रहकर याद आ रहे हैं। तुमने उस दिन कहा था न, "हमारा एक-एक लफ़्ज़, एक-एक भाव, एक-एक काम संसार में एक हलचल पैदा करता हुआ चला जाता है और हमारे पास किसी न किसी शकल में लौट आता है।"

रहमान—कैसे पुर-मायना और ख़ूबसूरत हैं ये लफ़्ज़।

वनिता—पापा ! जिस दिन चचा को आपने शमादान दे दिया था, तो आपने मुझे कहा था न—

रहमान—चचा को नहीं पगली ! फ़िरोज़ क़ैदी को ! (हँसता है)

वनिता—नहीं चचा को !

रहमान—हाँ, क्या कहा था ?

वनिता—चचा ! पापा ने कहा था—"वह शमादान दुनिया के अँधेरे में उजाला करने गया है"। मुझे इन लफ़्ज़ों पर कोई यक़ीन न था; पर कितने सच साबित हुए हैं ये ! क्यों बुआ ?

राधा—बिल्कुल ठीक !

रहमान—अच्छाई का बोया हुआ बीज कभी रायगाँ नहीं जा सकता।

भिखारिणी—आज यह कैसा शुभ मुहूर्त्त है। आज हम सब की अपनी-अपनी दिली भूख मिट गई है। क्यों न हम इकट्ठे उस भगवान् का हार्दिक धन्यवाद करें। भगवान्! हरेक दुखी और मायूस दिल की भूख को मिटायें।

रहमान—भिखारिणी माँ का ख्याल बिल्कुल वाजिब है। भिखारिणी से) हम सब आपकी धुन में शरीक होंगे।

(धुन बजती है। सब गाते है। मिस्टर कौल-रहमान एक दूसरे के कन्धे पर हाथ रक्खे। वनिता, सुल्ताना, मीना बाँहों में बाँहें डाले। मजदूर बच्चे भी शामिल होते हैं।)

आज बर आई तमन्ना दिल की सब,
खिल उठे गुंचे जो थे मुरझा गये।
सूखी डालों पै नज़र फल आ गये,
हो नहीं सकता है क्या जब हो नज़र—
उस पिता की, भटकता है, क्यों बशर?
तोड़ दे लङ्गर, तू उसपर छोड़ सब!